अध्याय 4

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में शिल्पगत प्रयोग

अध्याय 4

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में नाट्यशिल्पगत प्रयोग

प्रयोगशील नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में नाट्यशिल्प की दृष्टि से भी अनेक प्रयोग किये हैं जो आधुनिक नाट्यशिल्प की विशिष्ट देन है। अध्ययन की दृष्टि से उनके नाट्यशिल्पगत प्रयोगों को निम्नलिखित शीर्षकों में बाँटा जा सकता है -

1. वस्तुविन्यासगत प्रयोग
2. पात्रपरिकल्पनात्मक प्रयोग
3. संवादशिल्पगत प्रयोग
4. भाषाशिल्पगत तथा गीतसंरचनात्मक प्रयोग
5. प्रतीकात्मक - बिंबात्मक प्रयोग
6. शीर्षकों के अभिनव प्रयोग

1. वस्तुविन्यासगत प्रयोग

साठोत्तरी हिंदी नाटककारों में सुरेंद्र वर्मा एक प्रयोगशील नाटककार हैं। उनके नाटकों की संख्या कम होकर भी उन्होंने उनमें शिल्पगत कुछ विशिष्ट प्रयोग किये हैं। "सेतुबंध", "आठवाँ सर्ग", "नायक खलनायक विदूषक" गुप्तकालीन पृष्ठभूमि पर, "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" सामंतकालीन, "छोटे सैयद बड़े सैयद" उत्तरमुगलकालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित नाटक हैं। लेकिन ये ऐतिहासिक नाटक नहीं, वस्तुविन्यास की दृष्टि से इन नाटकों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि नाममात्र है। नाटककार अतीत की ओर जाकर भी आधुनिक जीवन संदर्भ से हमेशा जुड़ा रहता है और इसी कारण ये नाटक वास्तव में आज के जीवन का ही जीता जागता चित्रण प्रस्तुत करते है। "द्रौपदी" इतिहास का आभास निर्माण करनेवाला एक सामाजिक नाटक है और "एक दूनी एक" पूरी तरह से

LIBRARY KOLHAPUR

महानगरीय जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करनेवाला सामाजिक नाटक है। इन दो नाटकों में आधुनिक मानव जीवन की विसंगति-असंगति और तज्जन्य त्रासदी को चित्रित किया गया है।

"सेतुबंध" नाटक का वस्तुविन्यास एक ही अंक में समाहृत है। इस नाटक का प्रारंभ दासी दौवारिकी और विभावती के कथन से शुरू होता है। दोनों रात में देखे हुये नाटक की चर्चा नाटक के प्रारंभ में करती हैं। यहाँ विभावती और उसके पति प्रवरसेन नाटक देखने गये है परंतु बीच में ही प्रवरसेन उठकर बाहर आता है, कारण उसे इस नाटक के संवादों में अपने जीवन का आंशिक प्रतिबिंब देखने को मिलता है।

नाटक के मध्य में प्रवरसेन माँ की अनुपस्थिति में शयनकक्ष में जाकर एक काष्टपेटिका में लिपटी हुयी मेघदूत की पाण्डुलिपि देखता है और उसके मनमें माँ और उसके विवाहपूर्व प्रेमी कालिदास के बारेमें जो विचार आते हैं, इन्हीं विचारों के माध्यम से कथावस्तु का विकास हुआ है।

प्रवरसेन की माँ प्रभावती मनसे अपने विवाहपूर्व प्रेमी कालिदास से जुड़ गयी है परंतु भारतीय संस्कृति के खातिर शरीर से अपने धर्म पति के साथ समझौता कर रही है। वह अपने विवाहपूर्व प्रेम का पूरा राज अपने बेटे प्रवरसेन को बताती है। यथा – "सालों पहले त्रयोदशी का वह दिन .... मैं ने व्रत रखा था, फूल चुने थे, अबीर का तिलक लगाया था और लाक्षारस से भोजपत्र पर अपने मनभाये वर का चित्र बना कर .... पुष्पधन्वा को समर्पित कर दिया था।.... पूरा दिन कैसे कटा था.... पुलक से भरा, उमंगों में डूबा....।"[1] यहाँ माँ के साथ पुत्र जो चर्चा करता है, यह नया प्रयोग लगता है। इस प्रेमसंबंधों की चर्चा में सामाजिक बंधनों को नाते-रिश्ते के संबंधों को धक्का देकर हमें यह सोचने के लिये विवश कर दिया है कि, "क्या परपुरूष पति बन सकता है और पति परपुरूष" प्रभावती का निम्नलिखित कथन इसकी गवाही देता है – "जिस में परपुरूष पति बन जाये और पति परपुरूष?"[2] यहाँ नाटक की चरमसीमा लक्षित होती है।

चरमसीमा के बाद नाटक धीरे-धीरे उतार की तरफ मुड़ने लगता है। प्रवरसेन आवेश में आकर अपनी माँ प्रभावती के बारेमें क्रोध व्यक्त करता है। यहाँ प्रवरसेन का अन्तर्द्वन्द्व देखने योग्य है। उसे लगता है कि वह कालिदास के प्रेयसी का पुत्र है, वह अपना संतुलन खो बैठा है। प्रवरसेन के अन्तर्द्वन्द्व के साथ नाटक का मनोविज्ञानाकुल अंत कर नाटककार ने वस्तुविन्यास के बारे में एक सफल प्रयोग किया है। प्रवरसेन के शब्दों में ".... अगर कालिदास की स्वीकृति भी सच्ची नहीं है, तब फिर मैं भी अपने पिता की तरह एक औसत व्यक्ति हूँ.... अधिकतर सेतुओं के समान मेरा सेतु भी आधा या चौथाई या तिहाई है -- कीचड़ और काई-सना .. घुन और जंग लगा.... भग्न....जर्जर .... कंकालवत .."[3]

"आठवाँ सर्ग" नाटक तीन अंको में विभाजित है। नाटक का तीसरा अंक दो दृश्यों में

बाँटा गया है और दृश्यविधान एक ही है – कालिदास के भवन का बाहरी कक्ष। नाटककार ने नाटक "आठवाँ सर्ग" में रचना विस्तार की सहायता से अपनी प्रयोगधर्मिता को सिध्द करने का प्रयत्न किया है। यहाँ प्रियंवदा और अनसूया के हास-परिहास से नाटक का आरंभ दिखाकर नाटक में कालिदास और प्रियंगुमंजरी के कामोद्दीपक क्रीडाओं का आभास पैदा किया है।

नाटककार ने प्रथम अंक में शयनागार का वर्णन पति-पत्नी (शिव-पार्वती) रतिक्रीडा का वर्णन, मिलन का आभास देनेवाली हरकतें आदि को दिखाकर यौन मनोविज्ञान को उभारने का प्रयत्न किया है। साथ-ही-साथ सात सर्गों का विवरण, आठवें सर्ग के बारेमें प्रियंगु के साथ कालिदास की चर्चा, कालिदास के सम्मान समारोह के प्रसंग पर प्रियंगु का लज्जाशील होने के कारण सम्मान समारोह में सम्मिलित न होने का निर्णय आदि बातें आती हैं।

नाटक के दूसरे अंक में कथावस्तु का विस्तार हो जाता है। कालिदास ने "कुमारसंभव" में जो आठवें सर्ग की निर्मिति की है उसपर धर्मगुरू अश्लीलता का आरोप लगाते हैं। इसकी जानकारी अनसूया के माध्यम से प्रियंगुमंजरी को दी जाती है। वस्तुविन्यास विकास की दृष्टि से यह एक नया शिल्पगत प्रयोग है। कालिदास पर लगाये गये आरोप को स्वयं कालिदास नकारता है। क्षमा माँगने के लिये तैय्यार नहीं होता है बल्कि खुदकुशी करने के लिये उद्युक्त होता है। एक श्रेष्ठ, स्वाभिमानी रचनाकार के मंतव्य को नाटककार ने चित्रित किया है और मनोविज्ञान के धरातल पर कथावस्तु का विस्तार किया है। सम्राट चंद्रगुप्त जैसे रसिक भी इस अंक में "कुमारसंभव" के आठवें सर्ग को अश्लील माननेको तैय्यार नहीं हैं। लेकिन वे अपनी मजबूरी भी प्रकट करते हैं कि इस संदर्भ में राजा की अपेक्षा धर्माध्यक्ष का मत अधिक प्रमाणभूत माना जाता है[4], यह सम्राट चंद्रगुप्त की विवशता है।

नाटक के दूसरें अंक में ही वास्तव में नाटक की कथावस्तु की चरमसीमा और अंत दोनों एक साथ सन्निहित होते हैं। कालिदास और चंद्रगुप्त के बीच हुये वार्तालाप से यह बात और स्पष्ट होती है। कालिदास के शब्दों में – "समझ लूँगा कि कुमार का जन्म सम्भव नहीं हुआ, गर्भ में ही उसकी हत्या हो गयी।... तारक जीवित है, तो रहे। मुझे क्या?"[5] वास्तव में कलात्मकता की दृष्टि से "आठवाँ सर्ग" दूसरें अंक के इस वाक्य पर ही समाप्त हो जाना चाहिए था। फिर भी सुरेंद्र वर्मा ने तीसरे अंक में तीन साल बाद अभिज्ञान शाकुंतल की स्वर्णजयंती के अवसर पर कालिदास के सम्मान समारोह आयोजित करके नाटक के अंत को आगे ढकेला है। यहाँ नाटककार की एक विशिष्ट प्रयोगधर्मिता देखने को मिलती है।

नाटक के तीसरें अंक के प्रारंभ में अनसूया और कीर्तिभट्ट का प्रेमालाप चित्रित किया गया है जो नाटक के प्रथम अंक का ही पुनःसृजन है। नाटककार ने तीसरे अंक के दूसरें दृश्य में कालिदास की उदासीनता पर प्रकाश डाला है। कालिदास की उदासीनता नाटक के अंत में कालिदास के ही शब्दों में देखिए – "मेरा आक्रोश है रचना की इस प्रकृति पर ... कि यह अपने आप में सम्पूर्ण नहीं है।... यह सम्प्रेषण और तादात्म्य चाहती है।... हालाँकि अब मैं पर्याप्त उदासीन हूँ... और चाहता हूँ ... कि

यह अनुभूति बढ़ती जाए...शायद इसी का परिणाम है यह ... कि लिखना था इन्दुमती का स्वयंवर... अज के साथ उसका विवाह... जीवन में चाह और आस्था का सर्ग ... पर जब कोरे भोजपत्र की चुनौती सामने आयी, तो लिखने लगा... इन्दुमती की मृत्यु के बाद अज का विलाप...

x x x x

जीवन से अपेक्षाएँ बहुत कम होती जा रही हैं। ... रचना का थोड़ा सन्तोष... सौमित्र-जैसा सकाध मित्र... अपने घर का अपनापा..."[6] नाटक के तीसरें अंक के बारे में जयदेव तनेजा का मत समोचीन है- "प्रस्तुत नाटक का तीसरा अंक परिशिष्ट सा लगता है।"[7] यद्यपि नाट्यशिल्प की दृष्टि से नाटक का तीसरा अंक एक परिशिष्ट है फिर भी नाटककार की प्रयोगधर्मिता अत्याधिक मात्रा में नाटक की वस्तुविन्यास पर हावी होने के कारण यह तीसरा अंक परिशिष्ट होकर भी वस्तुविन्यासगत एक नया प्रयोग है।

"नायक खलनायक विदूषक" नाटक कर्पिंजल की मन:स्थिति के चढाव-उतार को दर्शानेवाला एक अंक का लघु नाटक है। प्रस्तुत नाटक की शुरूआत सूत्रधार के कथन से होती है। वह आते ही स्थापक को रंगमंचपर जमी हुयी धूल को हटाने के लिये सूचनाएँ देता है। रंगमंच की अव्यवस्था वहाँ पर जमी हुयी गर्द-गुबार देखकर वह निराशा व्यक्त करता है। सूत्रधार, स्थापक, अंबरमाल आदि के कथोपकथन प्रारंभिक रूप में ही यहाँ दिये गये हैं। सूत्रधार कर्पिंजल के न आनेका कारण पूछता है परंतु स्थापक और अन्य पात्र ये बता देते हैं कि इस अंक में वास्तव में कर्पिंजल (विदूषक) की आवश्यकता ही नहीं। परंतु कर्पिंजल के आगमन से ही नाटक की सही शुरूआत हो जाती है। वह रंगमंच पर आते ही "मैं विदूषक की भूमिका नहीं करूंगा"[8] इस वाक्य में ही नाटक के प्रारंभिक बीज देखने को मिलते हैं।

प्रस्तुत नाटक का विदूषक कर्पिंजल विदूषक की सपाट भूमिका अदा करने की अपेक्षा नायक अथवा खलनायक बनने का सपना देखता है , परंतु नाट्यसृष्टि की प्रतिकूल हवा को अनुभव करने के पश्चात उसे ये सारी बातें व्यर्थ लगती हैं। नाटककार ने कर्पिंजल की सहाय्यता से आधुनिक कलाकारों की ऊबकायी और नीरसता को तीखे व्यंग्य के साथ व्यंजित किया है। कर्पिंजल की मन:स्थिति, उसका विदूषक की भूमिका न करने का इरादा, नायक अथवा खलनायक बनने की चाह आदि में नाटक के वस्तुविन्यास का विकास देखने को मिलता है।

नाटक का अंत एन्टी-क्लाइमेक्स से हुआ है। जो कर्पिंजल विदूषक की भूमिका नहीं करना चाहता है वह अन्य नरेशों की प्रशंसा सुनने पर कुमारभट्ट के समझाने पर पुन:श्च विदूषक की भूमिका निभाने का निश्चय करता है।[9] शिल्प की दृष्टि से नाटक का प्रारंभ और अंत सूत्रधार के माध्यम से किया गया है। इस नाटक में भी वस्तुविन्यास की दृष्टि से नाटक की प्रयोगशीलता कर्पिंजल की मन:स्थिति का अंकन करने में उसके खण्डित व्यक्तित्व को दिखाने के लिये सहाय्यक हुयी है। नाटक का प्रारंभ

सूत्रधार और मंचसज्जा के रंगकार्मियों के वार्तालाप के साथ होता है और अंत सूत्रधार और नटी (मंदाकिनी) के वार्तालाप से होता है। यह शिल्प की दृष्टि से एक अभिनव प्रयोग है।

"सूर्य की अंतिम किरणे से सूर्य की पहली किरण तक" वस्तुविन्यास की दृष्टि से नया यथार्थवादी प्रयोग है। नाटक तीन अंकों में विभाजित है। इन तीन अंकों में समय का व्यवधान अपना विशेष महत्व रखता है। सूर्यास्त से सूर्योदय तक के समय घटित होनेवाली घटनाओं को नाटककार ने बड़े ही मार्मिक और कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। ये सभी घटनाएँ राजप्रासाद के एक ही शयनकक्ष पर, कभी उसके दो विभाग कल्पित करके दशनि का प्रयोग नाटककार ने किया है।

नाटक के प्रथम अंक में मत्स्य देश के राज्य के उत्तराधिकारी की समस्या को राजा ओक्काक और राज्य के वरिष्ठ अधिकारी के वार्तालाप द्वारा अंकित किया गया है और नियोग पध्दति के आधार पर शीलवती को उपपति चुनने के लिये मनाने की कोशिश की गयी है। इस अंक में नाटककार ने कथावस्तु को विकसित करके ओक्काक-शीलवती वार्तालाप के माध्यम से उन दोनों की मन:स्थिति का चित्रण ही प्रस्तुत किया है। नियोग पध्दति की घोषणा के उपरान्त नपुंसक राजा ओक्काक की मनोदशा और शीलवती की मनोदशा को एक सामान्य स्त्री-पुरूष की मनोदशा के रूप में चित्रित किया है। नाटककार ने कथावस्तु को इसतरह से विकसित किया है कि महत्तरिका मानो ओक्काक को "रनिंग कॉमेंट्री" के रूप में राजप्रासाद के प्रांगण में उपपति चुनने का समारोह किस ढंग से हो रहा है, यह बताती है।[10] नाटक के प्रथम अंक के अंत में शीलवती अपने पूर्व प्रेमी आर्यप्रतोष के गले में जयमाला डाल देती है। इनमें संदेह नहीं कि नाटक का प्रारंभ, कथावस्तु का यथोचित विकास, ओक्काक-शीलवती की मन:स्थिति और महत्तरिका की रनिंग कॉमेंट्री वस्तुविन्यास के विकास की दृष्टि से सुंदर प्रयोग है। यहाँ प्रथम अंक का समयावधान सूर्यास्त है। यह सूझ भी नाटककार की प्रयोगधार्मिता का लक्षण है।

नाटक के दूसरें अंक में कथावस्तु का विकास मनोविज्ञान के धरातल पर आगे बढ़ता है। स्त्री-पुरूष संबंधों की चर्चा दूसरे अंक के प्रारंभ में ओक्काक-महत्तरिका वार्तालाप से की गई है। इस चर्चा में ओक्काक की मानसिक रूग्णता मुख्यत: नजर आती है। ओक्काक की मन:स्थिति का वर्णन उनके ही शब्दों में देखिए - "नींद? ... (करूण मुस्कान सहित) महत्तरिका! आज की रात तो मुझे मृत्यु भी नहीं आयेगी। (मदिराकोष्ठ तक आता है। चषक भरता है। कुछ घूँट लेता है। बिना मुड़े हुए।) तुम जाओ अपने घर, अपने पति के पास... मेरे लिए क्यों उनकी निकटता से वंचित रहो?"[11] ओक्काक-महत्तरिका के कामसंबंधी वार्तालाप के पश्चात नाटककार ने शीलवती और आर्यप्रतोष के मिलन को चित्रित किया है। एक ही साथ नपुंसक ओक्काक की मानसिक रूग्णता, एकाकीपन, और शीलवती और आर्यप्रतोष के शारीरिक मिलन से शीलवती के कामतृप्ति का आनंद दिखाकर नाटककार ने दो विरोधाभासात्मक चरित्रों को उद्घाटित किया है। नाटक के दूसरें अंक के अंत में यह दृश्य दिखाया है। यहाँ नाटक की

चरमसीमा लक्षित होती है।

नाटक के तीसरें अंक में सूर्योदय का दृश्य दिखाया गया है। शीलवती राजप्रासाद में वापस लौटती है और ओक्काक के राजदरबार में ओक्काक की निंदा करती है और कामसुख का आनंद सब के सामने बताती है। यहाँ वह एक रानी न रहकर साधारण स्त्री के रूप में बर्ताव करती है; इतना ही नहीं नियोग पध्दति के द्वारा प्राप्त कामसुख बार-बार प्राप्त हो ऐसी इच्छा भी प्रकट करती है। परिवार नियोजन का वैज्ञानिक अवलंब पाकर मातृत्व पद को धिक्कारती है।[12] शीलवती के बारे में जयदेव तनेजा के विचार समीचीन है - "आत्मसंतोष और व्यक्तिगत सुख की खोज में उसे नारीत्व की सार्थकता मातृत्व में नहीं पुरूष के संयोग से प्राप्त सुख में दिखाई देती है और वह शील, मर्यादा, धर्म, परंपरा इत्यादि के सभी बंधन तार-तार कर केवल ओक्काक को ही नहीं वरन् समस्त पुरूष समाज को भी हतप्रभ कर देती है।"[13] वास्तव में परंपरागत रूप में स्त्री का स्त्रीत्व मातृपद में माना गया है; इस मातृपद की अवहेलना करके कामसुख को ही सबसे बड़ा सुख मानना अत्याधुनिक नारी की मनोदशा का चित्रण है। यहाँ नाटक का ऐन्टी-क्लाइमेक्स भी है और अंत भी है। संक्षेप में वस्तुविन्यास का शिल्पगत प्रयोग नाटककार की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

"छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक वस्तुविन्यास की दृष्टि से एक विशिष्ट शिल्पगत प्रयोग है। प्रस्तुत नाटक 31 दृश्यों में विभाजित है। जहाँ एक ओर "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में सूर्यास्त से सूर्योदय तक के अत्यल्प समयपर उस नाटक का वस्तुविन्यास चित्रित किया गया है; वहाँ दूसरी ओर "छोटे सैयद बड़े सैयद" का वस्तुविन्यास पूरे उत्तरमुगलकालीन समय पर आधारित है।" छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक में कथावस्तु अत्यंत क्षीण है। नाटककार ने 31 दृश्यों में छोटे सैयद (हुसैन अली) बड़े सैयद (अब्दुल्ला खाँ) के माध्यम से दिल्ली के कठपुतली बादशाहों के विलासी, क्लीव जीवन को तथा तत्कालीन कुटिल राजनीति को अंकित किया है। भाँड, नक्काल और बहुरूपियों के मार्मिक व्यंग्यात्मक गीतों द्वारा कथावस्तु के विकास क्रम को आगे बढ़ाया है। वास्तव में ये गीत एक प्रकार से कथावस्तु के अंतराल के ही सूचक हैं।

जहाँदार शाह, फर्रूखसियर, रफ़ीउद्दौला, रफ़ीउद्दर्जात, मुहम्मद शाह- इन कठपुतली बादशाहों के कार्यव्यापार विविध दृश्यों में विभाजित किये गये हैं। प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु शिल्प की दृष्टि से पारंपारिक नहीं है। एक बादशाह के पतन के बाद दूसरे बादशाह का उत्थान, दूसरे के पतन के बाद तीसरे का उत्थान दिखाकर नाटककार ने घटना क्रम के आधार पर वस्तुविन्यास को अंकित किया है। नाटक में वस्तु क्षीण है लेकिन घटनाओं का बाहुल्य है। उत्तरमुगलकालीन ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर नाटककार ने आज का जीवन संदर्भ प्रस्तुत किया है। नाटक के प्रारंभ से नाटक के अंत तक के कार्यव्यापारों में छोटे सैयद और बड़े सैयद प्रमुख रहे हैं। नाटक के अंत में अब्दुल्ला खाँ के विचार दृष्टव्य है - "सौंधी मुलायम मिट्टी...इसकी नमी मेरे हाथों में जज्ब हो रही है..."[14] अब्दुल्ला खाँ

मुसलमान होकर भी एक भारतीय है और भारत में सभी धर्म-पंथों के लोग अच्छी तरह से रहें ऐसी उसकी कामना थी लेकिन वह कामना सफल नहीं हो पायी, यह भी यथार्थ है। नाटककार ने राजनीति और राष्ट्रीय एकात्मता की दृष्टि से इस नाटक में एक नया वस्तुविन्यासगत प्रयोग दर्शकों के सामने रखा है। वास्तव में -हासोन्मुख कथावस्तु का ही यह नाटक शिल्पगत नया प्रयोग है।

दो अंको में विभाजित "द्रौपदी" महानगरीय पारिवारिक जीवन की एक कथा-व्यथा है। नाटक की कथावस्तु का मूल उत्स आधुनिक पारिवारिक जीवन की असंगति या विसंगति है। नाटक का शीर्षक द्रौपदी केवल महाभारतकालीन ऐतिहासिक द्रौपदी की याद दिलाता है अन्यथा पूरा नाटक सामाजिक है, आज के पारिवारिक जीवन की त्रासदी है।

द्रौपदी नाटक का प्रारंभ सुरेखा के आत्मपरिचय के द्वारा अंकित किया गया है। वह अपना और पूरे परिवार का परिचय इस ढंग से करती है कि आज का विसंगत पारिवारिक जीवन ही दृष्टिगोचर होता है। सुरेखा का आत्मकथन वास्तव में नाटक की कथावस्तु का बीज ही है। इस नाटक की कथावस्तु भी पारंपारिक शिल्प के अनुसार नहीं है। आज के टूटे हुये मानव जीवन के अनुसार इस नाटक की कथावस्तु भी टूटी हुयी, बिखरी हुयी है। नाटक के प्रारंभ में ही नाटककार ने सुरेखा और मनमोहन के टूटे हुये जीवन संदर्भ को मनोविज्ञान के धरातल पर अंकित किया है। जहाँ एक ओर सुरेखा अपने आत्मकथन के माध्यम से अपने परिवार की कथा स्वच्छंदी रूप में बताती है वहाँ दूसरी ओर मनमोहन के रूप में चार नकाबवाले इकठ्ठे आकर "लेकिन हमें आपत्ति है।"[15] ऐसे शब्दों में अपना गुस्सा प्रकट कर आज के टूटे हुये पारिवारिक जीवन को ही उद्घाटित करते हैं। मानों चारो नकाबवाले एक ही स्त्री पर टूट पडते हैं और वह स्त्री भी स्तंभित होती है। इस टूटे हुये जीवन संदर्भ को ही नाटककार ने आगे बढ़ाया है। नाटक के प्रारंभ में चार नकाबवाले और सुरेखा के माध्यम से नाटककार ने यह स्पष्ट कर दिया है कि ये चार नकाबवाले वास्तव में सुरेखा के पति अर्थात मनमोहन के चार विभाजित व्यक्तित्व है। नाटककार ने सुरेखा और मनमोहन के वार्तालाप द्वारा उनके भावहीन यांत्रिक जीवन को प्रस्तुत किया है।[16]

नाटककार ने सुरेखा और उसकी दो संतानें अलका और अनिल के वार्तालाप के माध्यम से आधुनिक महानगरीय जीवन को चित्रित केया है। विशेषतः प्रेम, सेक्स और विवाह के बारे में जो चर्चा होती है वह आज की विघटित जीवनमूल्यों का ही अंकन है। अलका राजेश से प्रेम करती है और अनिल वर्षा से प्रेम करता है। ये दोनों ही प्रेमप्रसंग आज के जीवन की यथार्थता है। पूरे नाटक की कथावस्तु मनमोहन के चार विभाजित व्यक्तित्व और द्रौपदी की मानसिक दशा पर केंद्रित है। आज का जीवन विसंगत है और आज का मानव भौतिक जीवन की अत्याधिक लालसा में डूब गया है और इसी कारण इसकी प्राप्ति के तलाश में वह हमेशा टूटता रहा है। मनमोहन का सफेद नकाबवाला व्यक्तित्व उसकी

प्रारंभिक पारिवारिक जीवन की शुध्दता का परिचायक है। उसका पीले नकाबवाला व्यक्तित्व उसकी अवसरवादिता, भ्रष्टाचारिता और आज के कार्यालयी जीवन की त्रासदी का द्योतक है। मैनेजर और मनमोहन के वार्तालाप द्वारा कथावस्तु को गति दी गयी है। लाल नकाबवाला व्यक्तित्व उसके सेक्स संबंधों को चित्रित करता है; पत्नी होकर भी वह अंजना, रंजना, वंदना से प्रेम करता है। वास्तव में ये प्रेम प्रेम नहीं बल्कि उसकी अदम्य वासना का, हवस का ही द्योतक है। मनमोहन का काले नकाबवाला व्यक्तित्व उसके दुर्गुणों का और काले करतूतों का परिचायक है। इन विभाजित व्यक्तित्वों के माध्यम से मनमोहन का जीवन व्यतीत होता है और पत्नी के रूप में सुरेखा को उसके विभाजित व्यक्तित्व से ही गुजरना पड़ता है। सुरेखा का यह जीवन महाभारतकालीन द्रौपदी का जीवन है। लेकिन दोनों के जीवन में अंतर है। सुरेखा का जीवन आधुनिक द्रौपदी का जीवन है।

नाटक की कथावस्तु में परिवर्तित नीतिमूल्य, स्त्री-पुरूष संबंध में वैविध्य, युवा वर्ग की स्वच्छंदता, पारिवारिक विघटन, पुरूष के विभिन्न रूप, नारी की जटिल मनस्थितियाँ, आधुनिक जीवन के भौतिक प्रतिमान आदि देखने को मिलते हैं। उपर्युक्त विषय कथ्य की दृष्टि से नये-नये आयाम प्रस्तुत करते हैं। पूरे नाटक में नाटककार ने महानगरीय पारिवारिक जीवन का एक-एक खण्डित चित्रण प्रस्तुत किया है और इसलिये पूरे नाटक में वस्तुविन्यास की दृष्टि से सलग कथावस्तु नहीं है। जीवन भी खण्डित और कथावस्तु भी खण्डित है। इतनाही नहीं जिसप्रकार आज के मानव का जीवन असंगत है उसप्रकार इस नाटक की कथावस्तु में भी असंगति-विसंगति है। नाटककार ने परंपरागत वस्तुशिल्प को तोडकर आधुनिक जीवन संदर्भ के अनुसार नाटक की कथावस्तु की रचना की है। वास्तव में इस नाटक की कथावस्तु -हासोन्मुख कथावस्तु का उदाहरण है जो नाटककार की प्रयोगधर्मिता की एक विशेषता है।

"एक दूनी एक" नाटक की कथावस्तु पूरी तरह से महानगरीय जीवन से संबंधित सामाजिक कथा है। "द्रौपदी" नाटक की कथावस्तु की भांति इस नाटक का वस्तुविन्यास भी खण्डित है। आज का महानगरीय जीवन अनेक विसंगतियों से भरा-पूरा है। 12 दृश्यों में विभाजित इस नाटक में आदमी-औरत पात्रों के माध्यम से आज के यांत्रिक, विघटित और असंगत जीवन को चित्रित किया गया है। इस नाटक का दृश्य विधान दो हिस्सों में अर्थात आदमी-औरत के कमरों में बाँटा गया है। "क्यूपिड डिटेक्टिव्ह एजंसी" तथा "कोलम्बस ट्रैविल्स" के माध्यम से महानगरीय जीवन की विडंबना को चित्रित किया है। वास्तव में नाटक की पूरी कथावस्तु आज के स्त्री-पुरूष संबंधों पर केंद्रित है। नाटककार ने सेक्सॉलॉजी (यौनाचार) अनेक प्रसंगों के द्वारा चित्रित करके नाटक की कथावस्तु को बुना है। लेकिन हर जगह वस्तुविन्यास आधुनिक मानव जीवन की तरह टूटा हुआ है, बिखरा हुआ है।

अनिलकुमार और लिली के माध्यम से नाटककार ने विफल प्रेम समस्या को चित्रित किया है। आज का प्रेमी अपनी प्रेयसी का प्रेम पाने के लिये जितना उतावला होता है उतनाही उसकी प्रेयसी का

प्रेम भागता जाता है। अतः नाटककार ने आज के विसंगत प्रेमजीवन को व्यंग्यात्मक रूप में चित्रित किया है।[17]

आज का जीवन एक गलतफहमी है, यह भी नाटककार ने आदमी और औरत के माध्यम से दिखाया है। आज का आदमी और औरत दोनों इंकि लेने में ही दिलचस्पी रखते हैं और जीवन की गलतफहमी को महसूस करते हैं। औरत के शब्दों में – "हम सब को अपने बारे में गलतफहमी होती है।"[18] स्त्री-पुरूष के संबंधों पर भी नाटककार ने प्रकाश डालने की कोशिश की है। जो औरत प्रारंभ में "आदमी के छूने से मुझे एलर्जी है।"[19] ऐसा कहती है वह आदमी के प्रस्ताव को साथ देकर उनके साथ शारीरिक संबंध रखती है।[20] आज के यौनाचार को नाटककार ने प्रस्तुत प्रसंग में चित्रित किया है।[21] नाटककार ने आज के विशृंखलित वैवाहिक और पारिवारिक जीवन को चित्रित किया है।

नाटककार ने नीरेंद्र ब्रह्मचारी और मायाराव के प्रेमसंबंध को आधुनिक जीवन में ढालने की कोशिश की है।आदमी और औरत के माध्यम से नाटककार ने इस प्रेमव्यापार को दर्शाया है। पहले नीरेंद्र ब्रह्मचारी और माया राव का गहरा लगाव रहता है। दोनों एक दूसरे को चाहते हैं लेकिन इत्तिफाक से माया राव झुनझुनवाला से मिलती है और उसे ज्यादा चाहने लगती है। परिणामवश उनकी शादी होती है। सात बरस की जिंदगी में रिंकी और पिंकी खिलखिलाने लगते हैं। सात बरस के बाद मोटर दुर्घटना में सुरजीत झुनझुनवाला मर जाता है। कुछ दिन बीतने पर नीरेंद्र ब्रह्मचारी माया राव के पास जाता है और शोक प्रकट करते हुये शादी का प्रस्ताव रखता है लेकिन उनकी शादी नहीं हो पाती। लेकिन इत्तिफाक से नीरेंद्र ब्रह्मचारी की मुलाकात मल्लिका सारस्वत से हो जाती है वह उसे ज्याटा चाहता है। जल्द ही उन दोनों की शादी हो जाती है। घर में रिंकी और पिंकी खिलखिलाने लगते हैं। माया राव दुःखी भाव से शामे-गम गुजारती रहती है। सात बरस बीत जाते हैं।इत्तिफाक से मोटर दुर्घटना में मल्लिका सारस्वत मर जाती है।कुछ दिन बीतने पर माया रावनीरेंद्र ब्रह्मचारी के पास जाती है शोक प्रकट करती है। कुछ दिन बीतते है।नीरेंद्र ब्रह्मचारी माया के पास आता है और शादी का प्रस्ताव रखता है। लेकिन उनकी शादी नहीं हो पाती। यहाँ नाटककार ने प्रेमव्यापार के प्रसंग को नये ढंग से व्यक्त किया है।

नाटककार ने आज के फैशन-परस्ती प्रेमव्यापार को भी एक प्रसंग में चित्रित किया है। एक प्रेमी तीन प्रेयासियों से अर्थात बीना, पायल और सपना से प्यार करता है। वे तीनों उससे प्यार का नाटक रचती हैं, नफरत करती हैं, उसको छोड़ देती हैं और अन्य व्यक्तियों के साथ शादियाँ कर के अपने मूल प्रेमी से अलग होती हैं। इस प्रसंग में नाटककार ने पागल प्रेमी के पागलपन को व्यक्त किया है। आदमी के शब्दों में – "ऐ मेरे वतन के शादीशुदा लोगो!...जो होना चाहिए था, नहीं हुआ। जो नहीं होना चाहिए था, हो गया।...नफरत का सबसे तीखा एहसास मुझे बीना के जरिये हुआ है, पायल से

पाये थरथराते सुख से मैं भरे प्याले की तरह छलक रहा हूँ...।"[22]

निम्नलिखित आरेख द्वारा यह प्रसंग अधिक स्पष्ट होता है।

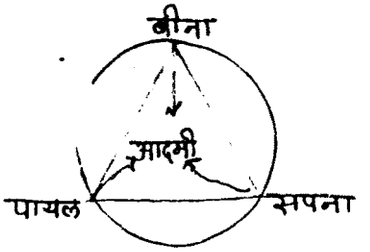

नाटक के अंत में बारहवें दृश्य में इन सभी प्रसंगों को एक-साथ जोड़ने की कोशिश की है। लेकिन इससे कथावस्तु में एकसूत्रता नहीं रही है। केवल प्रमुख घटनाओं को इकट्ठा कर के नाटककार ने आदमी और औरत के कार्यव्यापार के माध्यम से आधुनिक जीवन का संदर्भ एक साथ जोडने की कोशिश की है। आठवें सर्ग के तीसरे अंक की भाँति "एक दूनी एक" नाटक का 12 वाँ दृश्य एक परिशिष्ट जैसा लगता है लेकिन इतना सही है कि यह परिशिष्ट भी आज के यांत्रिक, विसंगत टूटे हुये जीवन का सार सर्वस्व है।

"एक दूनी एक" नाटक में नाटककार ने टेलीफोन और कम्प्यूटर के माध्यम से आदमी-औरत के स्त्री-पुरूष संबंधों को नये सिरे से अभिव्यक्त किया है। वस्तुविन्यास की दृष्टि से आज के ह्रासोन्मुख जीवन को ह्रासोन्मुख कथानक के द्वारा अभिव्यक्त कर नाटककार ने एक नया प्रयोग किया है।

2. <u>पात्रपरिकल्पनात्मक प्रयोग</u>

शिल्प की दृष्टि से नाटक में पात्र और चरित्रचित्रण को विशेष महत्व है। बिना पात्र और चरित्र सृष्टि के नाटक का रचना विधान हो ही नहीं सकता है क्यों कि नाटककार मानव जीवन का चित्र ही अपने नाटक में प्रस्तुत करता है। मानव का चरित्र या व्यक्तित्व बहुआयामी होता है। एक ही व्यक्ति के अनेक रूप देखने को मिलते हैं। मानव की जीवनयात्रा युगसापेक्ष है। मानव परिवर्तित जीवनमूल्यों को ढोने का प्रयास करता है। मानव की जीवन यात्रा किसी न किसी रूप में विकसित होती है। कभी उसका व्यक्तित्व खण्डित होता है तो कभी परिवर्तित। सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटको में पात्रों की सृष्टि मानव के यथार्थ जीवन को और कार्यव्यापार को ध्यान में रखकर की है। अत: उनके नाटकों के पात्र आज के मानव जीवन के प्रतिनिधि पात्र हैं। वे कल्पित कम हैं, यथार्थवादी ज्यादा हैं। इसलिए उनके पात्र हमारे जीवन के विविध पहलूओं को अभिव्यक्त करते हैं। सुरेंद्र वर्मा प्रयोगशील नाटककार होने के कारण उनके नाटकों के पात्र और चरित्रचित्रण में विविध प्रयोग देखने को मिलते हैं।

अ) <u>इतिहासाश्रित पात्र</u> – .सुरेंद्र वर्मा के नाटकों के अधिकतर पात्र इतिहासाश्रित पात्र हैं। प्रवरसेन, कालिदास, चंद्रगुप्त (सेतुबंध) कालिदास, प्रियंगुमंजरी, (आठवाँ सर्ग) जहाँदार शाह, फर्रूखसियर, रफीउद्दौला, रफीउद्दर्जात, मुहम्मद शाह (छोटे सैयद बड़े सैयद) आदि इतिहासाश्रित पात्र हैं। लेकिन इन ऐतिहासिक पात्रोंको नाटककार ने आज के जीवन संदर्भ में देखा है, परखा है। कुछ विशिष्ट पात्रों का उल्लेख यहाँ किया जा सकता है।

<u>प्रवरसेन</u> – "सेतुबंध" में गुप्तकालीन इतिहास से संबंधित पात्रों का संगठन प्रवरसेन को केंद्र में रखकर किया है। प्रवरसेन अटाव नरेश रूद्रसेन का बेटा है। प्रवरसेन अपनी माँ प्रभावती और कालिदास के विवाहपूर्व प्रेमसंबंधों को समझने के बाद उसके मन में मानसिक आंदोलन पैदा होते हैं। वह संभावना है कि उसके माँ की शादी जबरदस्ती से रूद्रसेन से हो गयी होगी और बिना भावनाओं के योगदान से वह उत्पन्न हो गया होगा। उसे यह भी लगता है कि उसके पिताजी सही रूप में कौन होंगे? परिणाम स्वरूप खुद के अस्तित्व के बारे में उसके मन में हीन ग्रंथि पैदा होती है और इसीसे वह खुद को अवैध संतान की भांति मान बैठा है। उसे उसकी रचना "सेतुबंध" को सर्वश्रेष्ठ रचना के रूप में घोषित करने के पीछे कालिदास का ही हाथ रहा होगा। ऐसा उसके मन में भ्रम पैदा होता है। इस भयावह अन्तर्द्वन्द्व के कारण वह खुद को टूटा हुआ, बिखरा हुआ, संत्रस्त, पीडित दुःखी समझ पाता है और खुद को आधा चौथाई पुरूष मान लेता है।[23]

इस प्रस्तुतीकरण में जो धृष्टता है चारित्रिक प्रयोग की दृष्टि से महत्वपूर्ण मोड है। प्रवरसेन की अन्तर्द्वन्द्वता, तनाव और आशंका को नाटककार ने नये रूप में ढालने का प्रयत्न किया है। डॉ. नरेंद्रनाथ त्रिपाठी ने "प्रवरसेन" के बारे में ठीक ही कहा है – "सेतुबंध के पात्र आधुनिक अत्याधुनिक हैं। प्रवरसेन ऐसी आधुनिक पीढी का प्रतिनिधित्व करता है।"[24]

<u>कालिदास</u> – "सेतुबंध" नाटक का पात्र कालिदास विलक्षण प्रतिभा का महाकवि है। जिसका यश और कीर्ति दसों-दिशाओंतक फैली हुयी है। वह प्रभावती का भूतपूर्व शिक्षक था और अत्यंतिक आकर्षक व्यक्तिमत्व का कवि था। परिणामतः प्रभावती मन-ही-मन उसकी तरफ आकर्षित होती है। कालेदास का प्रेम प्रभावती के मन में इतना गहरा बैठा है कि उसके द्वारा दी हुई पाण्डुलिपि वह जी-जान से रक्षित करना चाहती है। यहाँ प्रेमप्रसंगों की असफलता के रूप में कालिदास को केंद्र में रखकर नाटककार ने कालिदास के माध्यम से एक नया प्रयोग किया है।

<u>चंद्रगुप्त</u> – चंद्रगुप्त एक महाप्रतापी और साम्राज्यविस्तार की भावना रखनेवाला राजा है। वह अपनी इच्छा के अनुसार अपनी बेटी का विवाह अटाव नरेश रूद्रसेन से कर देता है। यह विवाह अपनी बेटी

प्रभावती के मन के खातिर नहीं करता बल्कि राजनीतिक स्वार्थ के कारण यह विवाह संपन्न कराना चाहता है। चंद्रगुप्त एकाधिकार शाही का अनुचर, महाराजधिराज शक्तिका प्रतीक, कलात्मक संस्कारों का सूचक और शकक्षत्रप रूद्रसिंह का दमनकर्ता होकर भी अपनी बेटी को उसकी सारी उपाधियाँ व्यर्थ लगती है। ब्याह की वेदीपर पुत्री का बलिदान देनेवाला यह राजा कितनी भी उपाधियों से विभूषित क्यों न हो उसे वह दमनकर्ता ही लगता है।[25] चंद्रगुप्त के माध्यम से नाटककार ने परंपरागत पितृवत्सल पिता की जगह स्वार्थी-शोषक पिता के रूप में चंद्रगुप्त को चित्रित करके एक नया प्रयोग किया है।

<u>कालिदास</u> – "आठवाँ सर्ग" नाटक में चित्रित पात्र कालिदास ज्ञानसंपन्न, माधुर्यप्रसाद, और ओज गुण से संपन्न है। वह प्रणयसंबंधी भावनाओं के चित्रण में अद्वितीय समझा जाता है। कालिदास के चरित्र में उसके कोमलरूप के साथ-साथ उसके भीतर स्थित कलाकार की वाक्पटुता, अहंपूर्णता, आत्मसम्मान आदि की अभिव्यक्ति नाटककार ने की है जो ये प्रवृत्तियाँ आज के रचनाकार में प्रचुरमात्रा में देखने को मिलती हैं। वह अपने लेखन स्वातंत्र्य के प्रति दृढ है। वह राजनीति का दबाव अपने लेखन स्वातंत्र्यपर अस्वीकार करता है और क्रुध्द होकर लेखन स्वातंत्र्य पर दबाव लानेवाली नीतिका निषेध करते हुये कहता है – "कुमारसंभव को मैं अधूरा ही छोड़ दूँगा आठवें सर्ग पर... आगे नहीं लिखूँगा। इस रचना को एक प्रकार से भुला ही दूँगा।"[26]

कालिदास की चरित्रगत विशेषताएँ, जटिलताएँ और अभिनय की चुनौतीपूर्ण भूमिका की दृष्टि से कालिदास का चरित्र विशेष उल्लेखनीय है। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमिपर नाटककार ने परंपरागत महाकवि कालिदास को खड़ा करके उसके दयनीय एवं दबावपूर्ण व्यक्तित्व को भी प्रकट कर के आधुनिक रचनाकारों की स्थिति और गति पर प्रकाश डाला है। जयदेव तनेजा ने कालिदास के चरित्र पर प्रकाश डालते हुये कहा है – "चरित्रगत वैविध्य, जटिलता और अभिनय के लिए चुनौतीपूर्ण भूमिका की दृष्टि से कालिदास का चरित्र विशेष उल्लेखनीय है।"[27]

<u>प्रियंगुमंजरी</u> – प्रियंगुमंजरी क्षत्रिय है और उसका प्रेमी कालिदास ब्राह्मण पुरूष दिखाकर नाटककार ने आधुनिक संदर्भ में आंतरजातीय विवाह की स्थिति और गति को मुखर बनाया है। प्रियंगु के चरित्र में उसके अपनी सखियों के साथ घुलमिल जाने का वर्णन देखनेलायक है।[28] प्रियंगु की शारीरिक क्रियाओं के माध्यम से नाटककार ने उसकी प्रखर अनुभूतियों को दिखाने का प्रयत्न किया है। दर्पणवाले प्रसंग में प्रियंगुमंजरी के शारीरिक अनुभवों की सूक्ष्मता, रात्रि के कामसंबंधों को मूर्त करती है। प्रियंगु के द्वारा दर्पण उठाकर देह के ऊपर की प्रतिछबि देखना, उँगली से अधरों को कपालों को छूना, कालिदास के आनेपर लज्जित होकर दर्पण छिपा लेना।[29] यह सारा कार्यव्यापार आधुनिक दैहिक संबंधों की स्थितियों को साकार करता है। यहाँ नाटककार की प्रयोगशीलता दर्शित होती है।

प्रियंगु द्वारा "आठवाँ सर्ग" की कथावस्तु के संदर्भ में कालिदास को कई सूचनाएँ देना, इसप्रकार के वर्णन के पठन से खुद की ही शृंगार लीलाओं का दर्शकों के द्वारा अनुभव करना आदि इन सारे प्रसंगों से वह लज्जित होती है और आठवें सर्ग में ऐसी बातें लिखना अयोग्य है, यह बताती है। यहाँ नारी सुलभ लज्जा देखने को मिलती है। प्रियंगु का अपने सहेलियों पर क्रोधित होना, सम्माननमारोह के दुखद समाचार को सुनकर व्यथा का प्रकट करना आदि बातों में भी एक नारी-सुलभ स्थिति को रेखांकित किया है। स्पष्ट है कि नाटककार ने प्रियंगुमंजरी के माध्यम से भी अपनी प्रयोगधर्मिता का साक्षात्कार करा दिया है।

मुगलकालीन बादशाह – "छोटे सैयद बड़े सैयद" पात्रपरिकल्पनात्मक प्रयोग की दृष्टि से नया प्रयोग है। सुरेंद्र वर्मा ने मुगलों से संबंधित विषयों को लेकर तत्कालीन कठपुतली बादशाहों का चित्रण प्रस्तुत किया है। जहाँदार शाह, फर्रूखसियर, रफीउद्दौला, रफीउद्दर्जात, मुहम्मद शाह इन बादशाहों को नाटकीय कार्यव्यापार की दृष्टि से प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित किया गया है। उत्तर मुगलकालीन राजनीति का यथार्थ दर्शन घटित करने की दृष्टिसे कठपुतली बादशाहों का प्रयोग बड़ा ही मार्मिक और सूचक है। नाटककार को पूरा उत्तरमुगलकालीन भारत का ही चित्र दिखाना था इसलिए पात्रों की भरमार है और इसी कारण किसी भी पात्र का चरित्रचित्रण पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुआ है।

आ) इतिहासाभासित पात्र-नाटककार ने अपने नाटकों में इतिहासाभासित पात्रों की परिकल्पना की है, जो आधुनिक जीवन को अभिव्यक्त करती है। ओक्काक, (सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक) अब्दुल्ला खाँ, हुसैन अली (छोटे सैयद बड़े सैयद) आदि पात्र उल्लेखनीय हैं।

ओक्काक – ओक्काक नपुंसकता के कारण शीलवती को संतुष्ट नहीं कर पाता। विवाहोपरान्त पाँच वर्ष के बाद उसको पुत्रप्राप्ति न होना, उत्तराधिकारी की चिंता से प्रजा का चिंतित होना, अमात्यपरिषद द्वारा शीलवती को नियोग के लिये आदेश देना, उपपति के रूप में आर्यप्रतोष का चुनाव किया जाना आदि सारी घटनाएँ ओक्काक के मानसिक स्वास्थ्य को बिगाड़ देती हैं। आगे चलकर ओक्काक की मनोग्रंथियों में रूग्णता का निर्माण हो जाता है। ओक्काक नियोग की रात्रि का कथन अपनी पत्नी से पूछना चाहता है और पत्नी के विस्तृत वर्णन के बाद वह चिंताक्रांत हो जाता है। अपनी चिंताओं को मिटाने के लिये वह निरंतर शराब की नशा में डूबना चाहता है। अपने मन के मैल को, मन की पीडा को दूर हटाने के लिये दासी महत्तरिका के साथ बातें करता है। उन बातों में यौन विषयक अतृप्ति देखने को मिलती है।

बड़े सैयद – अब्दुल्ला खाँ – बड़े सैयद उर्फ हसन अली साहस, धैर्य, वीरता और चाणक्य की भाँति कूटनीति में विख्यात है। नाटककार ने अब्दुल्ला खाँ को हिंदू- मुस्लिम एकता स्थापित करनेवाला एक संयमी

व्यक्ति के रूप में भी चित्रित करने की कोशिश की है लेकिन उसकी बात असफल बन जाती है। अब्दुल्ला खाँ राष्ट्रीय एकता का प्रयास करने में आगे बढ़नेवाला पात्र है। सीख, राजपूत, मराठे आदि सभी लोगों को इकट्ठा कर के राष्ट्रीय एकता बन जाय इस दृष्टि से अब्दुल्ला खाँ प्रयास करता है। सीखों के बारे में अब्दुल्ला खाँ के निम्नलिखित विचार दृष्टव्य हैं – "अब्दुल्ला खाँ गुरू गोविंदसिंह ने जाजी की जंग में शाह आलम का साथ दिया था। नयी विजारत उसी पुरानी दोस्ती की तलबगार है – लेकिन बादशाहत की मजबूती के लिए नहीं, बल्कि हिंदुस्तान की बहबूदी के लिए। इस सिलसिले में आपसे मुलाकात दरकार है –"[30]

अब्दुल्ला खाँ राजनीति को स्थिरता प्रदान करने की कोशिश करता है। उसका पूरा चरित्र गतिशील बन बैठा है। षड्यंत्रों से जनित व्यथा के कारण वह देश की यात्रापर निकलता है। अनेक यातनाएँ बरदाश्त करता है। छलपूर्ण राजनीतिक यंत्रणाओं में उसकी कूटनीति उसके व्यक्तित्व की दूरदर्शिता का परिचय देती है। बाह्य संघर्ष और राजनीतिक परिस्थितियों की प्रतिकूलता के कारण उसका चरित्र कसोटी पर उतर चुका है। अब्दुल्ला खाँ के चरित्रचित्रण में सुरेंद्र वर्मा ने अभूतपूर्व सफलता दिखाकर आधुनिक राजनीति की दुर्दशा और मुठ्ठीभर लोगों की देशभक्ति दिखाने का प्रयत्न किया है। आज षड्यंत्रियों के कारण ही देश में विघटन की स्थितियाँ पैदा हो चुकी हैं। नेताओं की स्वार्थी नीति से देश का विकास अवरूध्द होता जा रहा है। नाटककार ने उत्तरमुगलकालीन ऐतिहासिक परिस्थिति के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक भारत की दुर्दशा का चित्रण अब्दुल्ला खाँ के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

<u>छोटे सैयद</u> – छोटे सैयद उर्फ हुसैन अली अब्दुल्ला खाँ के भाई होकर भी उसके विपरीत प्रकृति के दिखायी देते हैं। वे साहसी, वीर जरूर है फिर भी राष्ट्रहित की अपेक्षा स्वार्थ में लथपथ डूबे रहते हैं। आधुनिक युग में भी छोटे सैयद तथा हुसैन अली जैसी अनेक शक्तियाँ स्थित हैं जो राष्ट्रहित को ताकपर लगाकर अपने राजनीतिक स्वार्थों और उद्देश्यों की पूर्ति में निरंतर जुड़ी रहती है। ऐसी शक्तियाँ देशहित में बाधक ठहरती हैं और देश पतन की स्थिति को पहुँच जाता है। छोटे सैयद का चरित्र भी तपकर हमारे सामने प्रकट होता है उसकी मानसिकता स्वार्थ से लिप्त है। वह स्वार्थान्ध बनकर देशहित में बाधक बन जाता है।

इ) <u>लघु मानव का अंकन</u> – आज के साहित्यकार का एक उद्दिष्ट अपने साहित्य में लघु मानव का अंकन करना है। सामान्यतया जो पात्र उपेक्षित दिखायी पडते है वे उपेक्षित नहीं होते उनमें भी कुछ विशिष्टता होती है जो मानवजीवन के संदर्भ में अपना विशेष महत्त्व रखती है इस दृष्टि से सुरेंद्र वर्मा ने भी लघु मानव को अंकित किया है। लघु मानव अंकन की दृष्टि से कर्पिंजल (नायक खलनायक विदूषक) अनतूया, प्रियंवदा, कीर्तिभट्ट (आठवाँ सर्ग), महत्तरिका (सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक)

भांड नक्काल और बहुरूपिया (छोटे सैयद बड़े सैयद) आदि पात्र महत्त्वपूर्ण हैं।

<u>सेवक वर्ग की कामोत्सुकता</u> - सुरेंद्र वर्मा ने सेवक वर्ग के सेवाभाव को यहाँ मुख्य रूप से चित्रित नहीं किया है बल्कि सेक्स के चित्रण को ही प्रमुखता दी है। प्रियंवदा की भांति ही अनसूया विवाहपूर्व संबंधों में रूचि रखनेवाली एक आधुनिका नारी को दिखाया है। प्रियंवदा और अनसूया चंचल और चपल परिचारिकाएँ हैं। उनके संवादोंद्वारा कालिदास-प्रियंगुमंजरी के शयनकक्ष का, उनकी कामपीडा का जिंदा चित्रण कर के आधुनिक युवा पीढी में कामक्रीडा विषयक कौतूहल दिखाने का एक नया प्रयोग नाटककार ने किया है।

कीर्तिभट्ट (सेवक) एक आधुनिक स्वच्छंदी प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया है। वह प्रियंवदा और अनसूया दोनों के प्रति कामासक्त है। वह प्रियंवदा से जो कहता है वही बात अनसूया को देखकर कहता है। डॉ. दूबे के मतानुसार - "कीर्तिभट्ट काम प्रताडित यौन लोलुप व्यक्ति का प्रतिनिधि चरित्र बनकर रह जाता है।"[31]

"सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में नाटककार ने महत्तरिका (दासी) के माध्यम से ओक्काक की मनःस्थिति का संकेत दिया है। महत्तरिका और ओक्काक के कथन में ओक्काक की मानसिक रूग्णता के दर्शन होते हैं।

<u>अभिनेता की त्रासदी</u> - राजनीतिक स्वार्थ की ओट में अटके हुये एक कलाकार की दुःखद गाथा यहाँ चित्रित करके नाटककार ने कपिंजल के माध्यम से कलाकार के बीच में निहित आत्मचेतना को वाणी देने का प्रयत्न किया है। कपिंजल विदूषक की सपाट भूमिका को छोड़कर नायक या खलनायक की भूमिका निभाना चाहता है। राजनीतिक स्वार्थ के लिये विदूषक का अभिनय करने को इन्कार करता है। यहाँ उसकी व्यक्तिचेतना कलाकार में परिवर्तित नयी चेतना प्रवृत्ति का परिचय करा देती है। कलाकार की यह चेतना-प्रवृत्ति कपिंजल के माध्यम से चित्रांकित कर के नाटककार ने पात्र चित्रण की दृष्टि से नया प्रयोग किया है। डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ल और कु. नीलम मसंद के निम्नलिखित विचार देखने योग्य हैं - " इस में कलाकार कपिंजल के हृदय की छटपटाहट को वाणी दी गई है... इस नाटक में व्यक्तित्व के तीन आयाम नायक, खलनायक और विदूषक के रूप में अभिव्यक्त किये गये हैं। यहाँ नाटककार इच्छाओं को जीवन का नियामक नहीं मानता, वह व्यक्ति के विभिन्न पक्षों के लिये परिस्थितियों को उत्तरदायी ठहराता है।"[32]

<u>खुश मस्करे कलाकारों की नियति</u> - "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक में भांड, नक्काल और बहुरूपिया - इन खुशमस्करे कलाकारों को प्रस्तुत किया है। उत्तरमुगलकालीन राजनीति का यथार्थ दर्शन पाठकों के सामने रखने की दृष्टि से तीन मस्करे पात्रों का प्रयोग बड़ा ही मार्मिक और सूचक है। ये खुशामस्करे कलाकार नाटकीय कार्यव्यापार की दृष्टि से प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित किये गये हैं। ये पात्र प्रासंगिक

रूप में ही अपना कार्यव्यापार मंचपर करते दिखायी पड़ते हैं। भांड, नक्काल और बहुरूपियों ने गीतों का सार्थक प्रयोग किया है। इन गीतोंद्वारा उत्तरमुगलकालीन भारत का पूरा चित्र दर्शकों के सामने रखने की कोशिश की है।

ई) आधुनिक युगबोध से संपृक्त पात्र – नाटककार सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में आधुनिक युगबोध को सर्वाधिक महत्त्व दिया है और उपर्युक्त पात्रों के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट पात्रों को आधुनिक युगबोध से संपृक्त किया है। इस दृष्टि से प्रभावती (सेतुबंध), शीलवती (सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक), सुरेखा, मनमोहन, अंजना, युवा पीढी के पात्र (द्रौपदी) तथा आदमी, औरत और चिंतामणि आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

प्रभावती – प्रभावती, राजा चंद्रगुप्त की पुत्री है। वह कालिदास से विवाह कर के उसे अपना जीवन साथी बनाना चाहती है। परंतु भाग्य ने करवटें बदलीं और पिताजी की हठवादिता के कारण उसका विवाह युवराज रूद्रसेन से संपन्न हुआ। नाटककार ने प्रभावती के माध्यम से, व्यक्ति की चेतना ऐसे दमन का प्रतिकार नहीं कर पाती और असहाय बनकर घुटनशीलता का अनुभव करती है, यह दिखाकर प्रभावती के चरित्र को प्रयोगशील बनाया है, इतना ही नहीं उसके चरित्र को कलात्मक वाणी देकर एक अच्छा खासा नया प्रयोग किया है। यहाँ यह भी दिखाने का प्रयत्न किया है कि विवश नारी माँ तो बन सकती है परंतु विवाह के पश्चात पत्नी नहीं बन सकती।[33]

शीलवती – शीलवती वास्तव में "असूर्यस्पर्श्या" है। विवाहोपरान्त पाँच वर्ष की अवधि के बाद भी उसका कौमार्य भंग नहीं हो पाया है। वह आर्यप्रतोष से अपने कौमार्य का परिचय कराते हुवे कहती है– "शायद तुम नहीं जानते ... मैं अभी तक कुमारी हूँ।"[34] नाटककार ने प्रारंभ में शीलवती को उसके नाम के अनुसार शीलवती रखा है किंतु आगे चलकर उसे एक आधुनिका के रूप में परिवर्तित किया है। आर्यप्रतोष के साथ रतिज क्रीडा करने के बाद लौटते हुये वह बहुत खुशकिस्मत नजर आ रही है। उसकी चाल में नशीलापन और बेसुधी है। वह अपने पति ओक्काक से इस संबंध के संभोग की गंध को विशद करती है। इतना ही नहीं आलिंगन, चुंबन, दंतचिह्न, चीत्कार, नखविन्यास आदि की सिहरन हूबहू ओक्काक के सामने पेश करती है। वह इस खोयी हुअी रात्रि को दुबारा पाना चाहती है। आज की नारी दोलायमान मन:स्थिति में पल रही है। कभी–कभी उसे दोहरी भूमिका निभानी पडती है। शीलवती की स्थिति आज की नारी की भांति न इधर की न उधर की रही है वह अपने पति का त्याग तो नहीं करना चाहती है फिर भी ओक्काक के प्रति असंतुष्टता जरूर व्यक्त करती है। ओक्काक के साथ नाटक के अंत में उसका बर्ताव उपेक्षाजन्य और आरोपित लगता है जिससे पतिधर्म का उल्लंघन किया गया है। ओक्काक के साथ उसका संलाप एक आधुनिक चालाक नारी की भांति लगता है। "जब आत्मसंतोष की अंधी दौड़ हो– व्यक्तिगत सुख की खोज...तो जीवन बहुत जटिल होता है, ओक्काक...और उनकी

माँग भी उतनी ही उलझी हुई...पूर्ति के लिए एक से अधिक व्यक्ति चाहिए...किसी से समाज में एक स्थान, किसी से भौतिक सुविधाएँ, किसी से भावना की तृप्ति...किसी से शरीर का सुख...!"[35]

सुरेखा - सुरेखा प्रारंभ में अपनी सीमित गृहस्थी में भी सुखी थी। विवाह के पश्चात् लंबा अंतराल व्यतीत होने के बाद उसे लगता है कि उसका पति कई अलग-अलग रूपों में बँटता जा रहा है। उसके शरीर से अन्य औरतों की बदबू आ पाती है। अर्थात् सुरेखा इससे व्यथित होती है। अपने पति के "घर"-"बाहर" के संबंधों से त्रस्त बनी सुरेखा की स्थिति महाभारत के "द्रौपदी वस्त्राहरण" के समय द्रौपदी की जो दयनीय स्थिति होती है ऐसी ही स्थिति से सुरेखा गुजरती है। यहाँ उसके व्यक्तित्व का वस्त्राहरण उसके पतिद्वारा होता जा रहा है यह यहाँ स्पष्ट लक्षित होता है। सुरेखा के बारे में देवेंद्रकुमार गुप्ता के विचार समीचीन है। "सुरेखा मनमोहन की पत्नी महाभारत के द्रौपदी की भाँति मनमोहन में बसे पाँच पति अथवा उसके जीवन के पाँच पहलुओं एक साथ झेलती रही है।"[36] गुमराह बना पति और युवावस्था में पदार्पित हुये बेटा-बेटी की ओर से पूर्णतः निराश होकर भी सुरेखा उनकी हरकतों के बारे में संतोष व्यक्त करती है। वह चाहती है कि बेटी प्रेमविवाह के बंधन में बंद हो जाय तो दहेज का झमेला नहीं रहेगा और आर्थिक बोझ भी हल्का होगा। आज के माँ-बाप आर्थिक स्वार्थान्धता के कारण पुत्री को प्रेमसंबंधों के मामले में पूरी स्वतंत्रता देना चाहते हैं। सुरेखा अपनी पुत्री अलका को सावधान करने की अपेक्षा इस संबंध में अधिक सतर्कता दिखाने का आदेश देती है। आधुनिक युग में आत्मकेंद्रित बनी हुयी भारतीय नारी अपने आदर्शों से हटती जा रही है। वह बाहर से संपन्न होने पर भी अंदर से रिक्त है।

अंजना - "द्रौपदी" में अंजना के माध्यम से आधुनिक नारियों की इस दशा का वर्णन आया है जो अपने बॉस से रतिज प्रक्रियाओं में रममाण होकर अच्छी-अच्छी नौकरियाँ, अच्छी-अच्छी सुविधाएँ, अच्छे-अच्छे ओहदे पाती है। नाटककार ने ऐसे नारियों के माध्यम से आधुनिक नारियों के जीवन का खोकलापन, घुटन, तनाव, बिखराव, संत्रस्तता, पीड़ा, मानसिक रूग्णता आदि की ओर संकेत किया है। अंजना अंत में अपने जीवन के प्रति एहसास करते हुये जीवन से थकी हुई, उबी हुई देखने को मिलती है। जिंदगी के प्रति उसकी ऊबकायी, "---इस रफतार का कहीं खात्मा नहीं, इस पागलपन से कभी छुटकारा नहीं---(रुँधे स्वर में) पर अब मुझ से बरदाश्त नहीं होता---बिना किसी सहारे के यह लम्बी लड़ाई, चौबीस घण्टों का यह नसों का तनाव, दिन-रात की दौड़ की यह आपाधापी ---"[37] इस वाक्य से स्पष्ट होती है। रंजना, वंदना आदि सभी नारी-पात्र अंजना की भांति गलत रास्ते पर जाकर अपने जीवन को विसंगतियों से भर चुके हैं। यहाँ आधुनिक नारी जीवन की विसंगतियाँ स्पष्ट की गई हैं।

<u>मनमोहन</u> - मनमोहन एक फर्म का अधिकारी है। वह इतना आत्मकेंद्रित है कि धन जुटाना ही उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य है। वह व्यक्तित्व में चार रूप समाया हुआ है। मनमोहन के अंदर काला मुखौटा, सफेद मुखौटा, तामसिक मुखौटा, लाल रतिजवाला मुखौटा एवं पीला मुखौटा आदि उसके विभिन्न मुखौटे हैं। वह अपनी पत्नी को अपने पाँच रूपों के साथ जोड़ना चाहता है।

उसका पीला नकाब उसके कंपनी कार्यालय के सिनियर असिस्टंट के रूप का प्रतिनिधि है। इस नकाब के परिणाम स्वरूप वह उच्चपद प्राप्त कर के गौरवान्वित होना चाहता है। लेकिन ठीक प्रकार से काम न करने पर कंपनी के डायरेक्टर द्वारा बार-बार झिड़कियाँ भी खाता है। स्पष्ट है के उसका पीला मुखौटा उसे उच्चपदस्थ बनने के लिये अंधा बना रहा है। लाल नकाब उसकी स्वच्छंदिता और मर्यादाविहीन यौन संबंधों का प्रतिनिधित्व करता है। इस रूप के अंतर्गत वह अंजना, रंजना आदि अनेक सी परिस्थितिवश मजबूर महिलाओं को प्रलोभन दिखाकर शनिवर के लिये और कई रातें मजे में गुजारने के लिये अपने चंगुल में फँसा लेता है। अपनी पत्नी द्वारा असंतुष्ट रहता है। वह ऑफिस के काम के बहाने घर से बाहर रहकर अपनी असंतुष्टी को इन स्त्रियों द्वारा तुष्ट करना चाहता है फिर भी अतृप्त रहता है। काला नकाब उसके बुराईयों की ओर संकेत करता है। वह उसके सात्विक भावों पर हावी हो चुकी है। जिससे उसका सहज रूप कभी भी उभर नहीं उठता है। वह न केवल मनमोहन के संस्कारों का उपहास करता है बल्कि अपनी क्रुर चेष्टाओं से उसका दमन भी करता है। मनमोहन का सफेद नकाब उसके सभ्य, शिक्षित, सदगुणी, उज्वल और सुसंस्कृत रूप का प्रतिनिधित्व करता है। इस रूप के कारण मनमोहन अपने मानसिक क्लेश और आत्मग्लानि से समय-समय पर बचने का प्रयत्न करता है। सफेद नकाब मूलरूप को उजागर करना चाहता है फिर भी काला नकाब उस पर इतना छाया हुआ है कि वह जल्द-ही-जल्द कुत्सित रूप धारण कर देता है। उसके सफेद और काले नकाब में सुर-असुर का द्वंद्व चलता है।[38]

इस प्रकार मनमोहन के इन रूपों के माध्यम से सुरेंद्र वर्मा ने आधुनिक युग के मनुष्य के खण्डित व्यक्तित्व को वाणी देने का काम किया है। मनमोहन के इन रूपों में चलनेवाला आंतरिक संघर्ष प्रतीक के रूप में पाठकों के सामने रखकर हर व्यक्ति के भीतर छिपी हुयी विभिन्न मनोवृत्तियों का एक लेखा-जोखा पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। मनमोहन नयेपन या परिवर्तन की तलाश में दौडधूप करता हुआ घर या दफतर की जिंदगी से टूट गया है, यही उसकी दुःखांतिका है।

<u>चारों युवा पात्र</u> - अलका, अनिल, वर्षा, राजेश ये चारों पात्र आधुनिक युवा पिढी का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये चारों ऊँची कक्षाओं में विद्यार्जन करने वाले उन्मुक्त छात्रों के प्रतिनिधि हैं। शिक्षा और उम्र के दायरे से उनका संबंध-सूत्र मिट चुका है। इन पात्रों पर अपने माँ-बाप के संस्कारों का गहरा प्रभाव लक्षित होता है। अलका और अनिल के माध्यम से उच्चवर्गीय परिवारों में स्थित भाई-बहनों के रिश्तों में

उत्पन्न हुई टूटनशीलता का परिचय दिया हैं। आज नाते-रिश्ते में गिरावट उत्पन्न हो चुकी है। रिश्तों का पावित्र्य समाप्त हो चुका है। अलका अपनी माँ को स्पष्ट करते समय तनिक भी संकोच नहीं करती कि उसके प्रेमी ने "दो बार ब्लाऊज के बटन खोले हैं।"[39] अलका माँ-बाप से स्वतंत्र है।उसे माँ ने स्वतंत्रता दी है कि अपने मन मुताबिक जीवनसाथी को चुने। उसने राजेश के आग्रह के खातिर समस्त यौन की परिसीमाओं को बाँध लिया है। अनिल में अनेक दुर्गुणों का संचय है। वह वर्षा से प्रेम करता है। अनिल समस्त यौन की परिसीमा तोड़ मरोड़ चुका है।

इन चार युवा पात्रों के माध्यम से हमें यह पता चलता है कि ये एल.एस.डी. एवं मादक पदार्थों के सेवन के द्वारा पूर्णतः दिशाभ्रांत हो चुके हैं। इन पात्रों ने भारतीय संस्कृति में स्थित उच्च-नैतिक मूल्यों की गिरावट में महत्त्वपूर्ण योगदान निभाया है। पता चलता है कि आज की यह पीढी भ्रांति में पडकर बाह्य आकर्षणों की जकड़न में बंधी होकर खुद को समाप्त करने के लिये आमदा हो चुकी है। नाटककार ने यहाँ नयी पीढी के बिगड़े हुये रूप को उद्घाटित किया है।

<u>आदमी-औरत</u> - सुरेंद्र वर्मा का "एक दूनी एक" नाटक पात्रपरिकल्पना की दृष्टि से एक विशिष्ट अभिनव प्रयोग है। प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने मुख्यतया आदमी और औरत - इन पात्रों के माध्यम से महानगरीय विविध पात्रों की क्रिया कलापों को उद्घाटित किया है। किसी एक या दो पात्रों का चरित्रचित्रण प्रस्तुत करना नाटककार का उद्देश्य नहीं है बल्कि आज के बिखरे हुये जीवन में बिखरे हुये व्यक्ति किस प्रकार अपनी शोकांतिका, विसंगति प्रकट करते है, यह दिखाया है।

गृहस्थी जीवन की त्रासदी को व्यक्त करने की दृष्टि से हंसराज और मालती को चित्रित करने में नाटककार कामयाब हुआ है। आज की गृहस्थी जीवन में छोटे-छोटे कारणों से पति-पत्नी में मुठभेड होती है और उनका गृहस्थी जीवन बिगडता है; और विवश होकर इस बिगड़ते गृहस्थी जीवन को पुनःश्च जोडने की कोशिश की जाती है। आदमी के समझौते के शब्द देखिए - "हंसराज, मैंने खोने का दर्द जाना है, इसलिए कह रहा हूँ...कहाँ छिपे बैठे हो? किसी दोस्त के यहाँ? मलाड के किसी गैस्ट-हाउस में?...या लग्जरी बस में गोआ की राह पर हो?...ऐसा नहीं करते, हंसराज तुम तो गृहस्वामी हो, तुम्हीं को निभाना है।"[40]

नाटककार ने त्रिलोकीनाथ पाराशर पात्र के माध्यम से आज के युवक-युवतियों के विवाह की समस्या को उद्घाटित किया है। आज की युवती प्रेम एक से करती है और उसकी शादी दूसरे से की जाती है। लेकिन प्रेम प्रकरण का बहाना दिखाकर आज का आदमी ऐसे युवतियों के बाप को कैसे ब्लॅकमेल कर सकता है, यह दिखाया है। पुरूषास्वर में निम्नलिखित वाक्यांश देखिए - "इतवार रात आठ बजे गेट वे ऑफ इंडिया पर कमीज में पीला गुलाब लगाये एक सज्जन को अगर मैंने बिना कोई निशान लगे

पचास हजार के दस-दस के नोट न दिये, तो बेटी के इक्यावन प्रेमपत्र शादी के मंडप में नफ्तपदी से पहले दूल्हा के हाथ में दे दिये जायेंगे।"[4]

सुरेंद्र वर्मा ने "एक दूनी एक" नाटक में दृश्य ।। में आज की स्त्री की सेक्स संबंधी छटपटाहट को सुंदर शब्दों में व्यक्त किया है। आदमी के बिना औरत जिंदा नहीं रह पाती। उसके सहवास में ही उसे सबकुछ मिलता है और वह सबकुछ बताती भी है। किसी एक रात में आदमी और औरत किसी एक दूसरें के सहवास में आ जाते हैं तब औरत अपनी सेक्स संबंधी अकुलाहट प्रकट करती है। निम्नलिखित वार्तालाप देखिये -

औरत : बारिश तेज हो गयी। मुझे बारिश में बहुत उदास लगता है...पर अभी नहीं... तुम पास हो न। तुम पास हो—तुम्हारी साँसों का एहसास... तो मैं किस तरह महफूज महसूस कर रही हैं।...तुम न होते, तो मैं गुड़ी-मुड़ी होकर बिस्तर में घुसी होती।

औरत : एक बात बताऊँ?

आदमी : हूं।

औरत : ठीक सात महीने पहले मैं आत्महत्या करना चाहती थी। सायनाइड लायी थी। लाश के पास पाया जाने वाले नोट भी लिख लिया था। तीन दिन कोशिश करती रही, पर हिम्मत नहीं हुई। फिर सायनाइड वापस कर दिया।

नाटककार ने इस नाटक में औरत का चरित्रचित्रण मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है।

उ) <u>चरित्रचित्रण प्रणाली के विभिन्न प्रयोग</u> - नाटककार ने मुख्यतया पात्रों की संख्या, पात्रोंके नामकरण, उनकी चरित्रसृष्टि की विभिन्न प्रणालियाँ आदि को कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है।

<u>पात्रों की संख्या</u> - सामान्यतया सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में पात्रों की संख्या सीमित है और वस्तुविन्यास, चरित्रचित्रण, रंगमंच और अभिनेयता की दृष्टि से उनका निर्माण युक्तसंगत है। स्त्री और पुरूष दोनोंही प्रकार के पात्र नाटकों में आ गये हैं। लेकिन पात्रों की संख्या की दृष्टि से एक अभिनव प्रयोग का उत्कृष्ट उदाहरण "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक है। इस नाटक में कुल पात्रों की संख्या अस्सी के आस पास है। इसके विपरीत "एक दूनी एक" नाटक में केवल दो ही पात्र अंकित हैं - आदमी और औरत। इन दो पात्रों के माध्यम से ही नाटककार ने टेलिफोन और कम्प्यूटर की सहायता से लगभग तीस पात्रों के कार्यव्यापारों और जीवन को अभिव्यक्त किया है। यह भी पात्रपरिकल्पना की दृष्टि से अभिनव प्रयोग है।

<u>पात्रों के नामकरण</u> - सुरेंद्र वर्मा ने नाटकों के पात्र के नामकरण पर भी सूक्ष्म सोचविचार किया है और नामकरण के विभिन्न प्रयोग अंकित किये है। इस दृष्टि से शीलवती, सुरेखा, मनमोहन, अनिल, अलका

तथा आदमी और औरत उल्लेखनीय पात्र हैं। शीलवती – "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" की एक प्रमुख नारी पात्र है। शीलवती नामकरण में सामान्य अर्थ में शीलसंपन्न स्त्री का बोध होता है लेकिन नाटककार ने परिस्थितिजन्य शीलवती को एक शीलभ्रष्ट स्त्री के रूप में चित्रित किया है। नियोग पध्दति के द्वारा आर्यप्रतोष के साथ शीलवती का शारीरिक संबंध स्थापित हो जाता है और उसका कौमार्य भंग होता है। आज के बदलते जीवनमूल्यों की तलाश में शीलवती नामकरण विरोधाभासात्मक है। परिस्थितिजन्य जीवन की विचित्रता का एक परिहास है। एक ऐतिहासिक आवरण का प्रछन्न में हट जाना है। आज की अत्याधुनिका स्त्री भले ही नाम से शीलवती हो सकती है लेकिन आंतरिक तौर पर उसका नाम कितना मर्म भेदी होता है, उपहासात्मक होता है यह नाटककार ने दिखाया है।

"द्रौपदी" नाटक की नायिका सुरेखा है। नाटककार ने आधुनिक पारिवारिक जीवन से संबंधित सुरेखा को द्रौपदी के रूप में चित्रित किया है। यहाँ सुरेखा द्रौपदी का प्रतीक है। इस नाटक का नायक मनमोहन है। पात्र के इस नामकरण में भी विशिष्टता है। यहाँ मनमोहन उसके संपर्क में आनेवाली स्त्रियों (अंजना, रंजना, वंदना, और पत्नी सुरेखा) को भी मोहित करता है। उसका ये भुलावा देने का रूप पौराणिक "मनमोहन अर्थात श्रीकृष्ण" से कुछ कम नहीं है। इस नाटक में पात्रों के नामकरण की लघुरूप की विशिष्टता भी देखने लायक है जैसे – सुरेखा का "रिखी", मनमोहन का "मनि", अलका का "लकी", अनिल का "नील" आदि। "एक दूनी एक" नाटक के पात्र आदमी और औरत के नाम से दिखाये गये हैं। लेकिन ये दो पात्र नाटक में प्रयुक्त सभी पात्रों के विभिन्न नामों का प्रतिनिधि करनेवाले पात्र हैं। प्रत्येक व्यक्ति का चाहे वह स्त्री हो या पुरूष उसका विशेष नाम होता है लेकिन नाटककार ने विशेष नामों की जगह आदमी और औरत सामान्य नामों को ही समेट दिया है। जो नाटककार की प्रयोगधर्मिता की विशिष्टता है। कम्प्यूटर के लेए चिंतामणि नाम देकर वैज्ञानिक नामकरण प्रयोग किया है।

<u>चरित्र सृष्टि की अन्य प्रणालियाँ</u> – सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों की चरित्र सृष्टि में कुछ विभिन्न प्रणालियों का भी प्रयोग किया है।

(अ) चित्रित पात्रद्वारा स्वयं अपने चरित्र का उद्घाटन करनेवाले पात्रों में प्रभावती, ओक्काक, सुरेखा आदि उल्लेखनीय पात्र हैं। आत्म कथन के द्वारा पात्र सृष्टि का यह प्रयोग नाट्यानुकूल है। ओक्काक की मानसिक रूग्णता का उद्घाटन उसकी आत्मकथन शैली में देखने को मिलता है। ओक्काक के शब्दों में – "बचपन में ही अनाथ हो जाना... किसी से घुलमिल न पाना... बहुत अकेला हो जाना... हमेशा का अंतर्मुख, हमेशा का निर्णय-दुर्बल, हमेशा का अनिश्चयी...बहुत चुप, बहुत संवेदनशील, बहुत भीरू... हर अन्याय, हर अपमान को चुपचाप पी लेना...आत्मविश्वास की कमी, स्वभाव का ठंडापन, मन की अस्थिरता...बचपन में एक के बाद एक व्याधियों के आक्रमण...उन्होंने कहा कि मेरे हर रोग का

निदान ब्याह है।"[42]

(ब) खण्डित व्यक्तित्व अंकन – आज का नाटककार या साहित्यकार पात्रों के चरित्रचित्रण में मनोविज्ञान के धरातल पर खण्डित व्यक्तित्व का अंकन करता है। इस दृष्टि से मुख्यतया प्रभावती, प्रवरसेन, कालिदास, शीलवती, ओक्काक, अब्दुल्ला खाँ, सुरेखा, मनमोहन आदि पात्र उल्लेखनीय हैं। खण्डित व्यक्तित्व अंकन शीर्षक अध्याय में सविस्तर विवेचन पहले ही किया गया है।

इसमें संदेह नहीं कि नाटककार ने आमतौरपर अपने नाटकों के पात्र के माध्यम से साधारण जनजीवन को ही चित्रित किया है; चाहे पात्र ऐतिहासिक हो, पौराणिक हो, काल्पनिक हो या सामाजिक हो।

3. संवाद शिल्पगत प्रयोग –

साठोत्तरी नाटककारों में संवाद शिल्पगत प्रयोग की दृष्टि से सुरेंद्र वर्मा अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनके नाटकों की संवादयोजना बड़ी ही मार्मिक तथा नाट्यानुकूल है। संवाद नाटक का प्राणतत्त्व है और सुरेंद्र वर्मा ने संवादशिल्पगत प्रयोग के द्वारा नाटकों में प्राण भर दिये हैं।

क) एकालाप शिल्प – सुरेंद्र वर्मा ने "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" में ओक्काक "द्रौपदी" में सुरेखा के एकालाप द्वारा पात्रों का अन्तर्द्वन्द्व तथा उनका व्यक्तिगत परिचय कराया है। "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में ओक्काक का एकालाप अनेक स्थलोंपर व्यक्त किया गया है। नाटक के दूसरे अंक में महत्तरिका और ओक्काक के बीच जो वार्तालाप दिखाया गया है उसमें ओक्काक का प्रारंभिक चरित्र और नपुंसक ओक्काक की विक्षिप्तता बड़ी ही मार्मिक है। इस संदर्भ में ओक्काक के दीर्घ वार्तालाप दृष्टव्य हैं– "...वह संगिनी बन कर अकेलापन दूर करेगी, मित्र बन कर कामकाज में संभाले देगी...माँ की ममता, बहन का स्नेह, प्रेयसी का प्रेम...हर कमी दूर होगी, सारे अभाव पूरे होंगे...खोया हुआ आत्मविश्वास मिलेगा..."[43]

"द्रौपदी" नाटक का आरंभ सुरेखा के एकालाप संवाद से होता है। इन संवादों से एक आत्मीयतापूर्ण वातावरण की सृष्टि होती है और कथावस्तु का संकेत इसी स्थल से शुरू होता है। द्रौपदी के शब्दों में – मेरे एक पति हैं। नाम है उन का मनमोहन। निकट के लोगों ने उसे मनि कर दिया है। आप लोग भी चाहे तो कह सकते हैं यही -- मुझे कोई आपत्ति नहीं।

ख) मनःस्थिति प्रवण संवाद शिल्प – वास्तव में सुरेंद्र वर्मा मनोवैज्ञानिक नाटककार हैं। स्त्री–पुरूषों की मनस्थिति का योग्य ज्ञान उनमें है। उनके सभी नाटकों में किसी न किसी रूप में पात्रों की मनःस्थिति का चित्रण संवादों के द्वारा किया गया है। "आठवाँ सर्ग" में सुरेंद्र वर्मा ने कालिदास और धर्माध्यक्ष के वार्तालाप द्वारा कालिदास की (स्वाभिमानी) मनःस्थिति का यथार्थ चित्रण किया है। कुमारसंभव पर कुछ

बंधन लगाये जाय और, कालिदास न्यायालय में क्षमायाचना करे इस प्रकार के धर्माध्यक्ष की माँग को कालिदास जैसा श्रेष्ठ रचनाकार कैसे ठुकराता है, उसकी मन:स्थिति का चित्रण देखिए:-

धर्माध्यक्ष : ""कुमारसंभव" के ऊपर कुछ बन्धन लग जाएँगे।

कालिदास : जैसे?

x x x x

कालिदास : क्या ? लेखक क्षमा-याचना करे? ... आपने यही कहा है न?

धर्माध्यक्ष : जी हाँ। ...शायद आप नवम् सर्ग की रूप रेखा में खोए हुए थे।

x x x x

धर्माध्यक्ष : ... अगर आप सोच-विचार करना चाहते हैं, तो आपको दो दिन का समय देया जाता है। आप परसों सायंकाल तक मेरे पास आ जाएँ या सूचना भिजवा दें कि क्या आप क्षमा-याचना के लिए प्रस्तुत है?

कालिदास : (तीव्र स्वर में) नहीं!

धर्माध्यक्ष : और अधिक समय चाहिए?

कालिदास : (उसी प्रकार) जी नहीं, धन्यवाद!"[44]

अमात्य-परिषद के द्वारा शीलवती को उत्तराधिकारी की प्राप्ति के लिये नियोग पध्दति का अवलंब कराने के लिये बाध्य किया जाता है। उस समय नाटककार ने महामात्य और शीलवती के संवादों द्वारा शीलवती की मन:स्थिति का चित्रण किया है। निम्नलिखित संवाद देखिए:-

महामात्य : (धीमे स्वर में) "महादेवि!

शीलवती : समझ में नहीं आता ...क्या करूँ, क्या न करूँ...?

x x x x

शीलवती : सोचती हूँ और काँप-काँप जाती हूँ।...एक अनजाना भवन...उस भवन का शयनकक्ष... उस शयनकक्ष. की शैया...उस शैया पर...वेश्याओं के मनोबल की जितनी सराहना की जाये, कम है।"[45]

"एक दूनी एक" नाटक के दृश्य-क्र.6 में पारिवारिक दिक्कतों के झमेले में अटके हुये एक त्रस्त आदमी का चित्र पेश किया है। आज कई परिवार ऐसे हैं जो पति-पत्नी के रूप में एक दूसरे से तदाकार न होकर नीरस जिंदगी जी रहे हैं। इस निराशा से दोनों में से किसी न किसी एक की हत्या पर भी वे आमदा होते हैं। उदा.- ...मैंने बरसों इन्दुमती की हत्या करने की योजनाएँ बनायी हैं। स्लो पायजन देकर धीरे-धीरे दो साल में खात्मा, गँडासे के एक बार से एक पल में आजादी, बर्सोवा समुद्र-तट पर पानी में गला घोंट देना, रसोईघर में मिट्टी का तेल छिड़क कर झुलसाती लपटों से ठंडक

पाना... एक बार तो चूहे मारने की दवा चाय में मिला कर प्याला उसे लगभग थमा ही दिया था... पर यही सोचता रहा कि पकड़ा गया, तो बच्चों का क्या होगा?'

इस कथन से पारिवारिक स्त्री-पुरूष संबंधों में आनेवाले तनाव के कारण किस प्रकार की हानियाँ होती हैं, हत्याएँ होती हैं, यह लेखक ने सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है। गोविंद चातक के मतानुसार - "सुरेंद्र वर्मा की संवादीय संरचना में जो तत्व सबसे अधिक प्रभावित करता है वह है पात्र की अपनी मनःस्थिति और मानवीय संवेदना, उसके शब्द संयोजन, वाक्यविन्यास, वाक्पध्दति को प्रभावित करता है।"[46]

ग) <u>सांकेतिक संवाद शिल्प</u> - "आठवाँ सर्ग" नाटक में नाटककार ने कालिदास के सम्मान सभा का आयोजन प्रत्यक्ष रूप से सभा का दृश्य दिखाकर नहीं किया है लेकिन प्रियंगु, अनसूया पात्रों के बीच संवाददवारा चित्रित किया है जिससे सभा का आभास हो जाता है; यह नाटककार का संवाद शिल्प की दृष्टि से अभिनव प्रयोग है।

अनसूया : " कविवर ने अपना प्रारम्भिक वक्तव्य दिया, कथानक की संक्षिप्त रूपरेखा बतलाई फिर काव्य-पाठ प्रारम्भ किया...मंडप में ऐसा सन्नाटा था, जैसे वह बिलकुल निर्जन हो। सब लोग मंत्रमुग्धसे सुन रहे थे। सबकी आँखे कवि पर लगी थीं। बस उनका मधुर स्वर... और वातावरण में काव्य-पंक्तियों की ध्वनियों का वितान, जो धीरे-धीरे घना होता जा रहा था।...श्लोक के बाद श्लोक और पृष्ठ के बाद पृष्ठ..."[47]

"सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में नियोग पध्दति के माध्यम से उपपति चुनाव के समारोह का चित्रण महत्तरिका औक्काक को बताती है - "नागरिकों के समूह को चीर कर वह शीघ्रता से आगे बढ़ रहा है।...कुछ कोलाहल होने लगा है।...महामात्य इत्यादि भीड़ में उसी ओर देख रहे हैं।...महाबलाधिकृत यह जानने के लिए बढ़ने लगे हैं...कि क्या बात है... महादेवि भी दायी पंक्ति के बीच में रूक गयीं।...एक सैनिक ने उस व्यक्ति को रोकने का प्रयास किया।... वह उससे कुछ कह कर ...फिर आगे आने लगा है। (विराम। आवेश में) अरे, वह तो बिलकुल पास आ गया।...दोनों पंक्तियों के बीच में ...(विराम) महादेवि बिलकुल स्तब्ध खड़ी है। वह भी उनको एकटक देख रहा है।"[48]

घ) <u>सूचनात्मक खण्डित संवाद</u> - सुरेंद्र वर्मा ने अपने कुछ नाटकों में सूचनात्मक खण्डित संवादों को भी प्रस्तुत किया है। "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में शीलवती और आर्यप्रतोष के मिलन सुख का चित्रण निम्नलिखित वार्तालाप में देखा जा सकता है।-

प्रतोष : "शीऽऽ ल...!

विराम।

शीलवती : हूँ...।

विराम।

प्रतोष : चुप क्यों हो...?

विराम।

शीलवती : नहीं तो...।

हँसी।

प्रतोष : कुछ बोलो...?

शीलवती : उं हूं...।

विराम।

प्रतोष : दीप जला दूँ...?

शीलवती : नईं...सब कुछ बदल जाता है प्रकाश के साथ...।"[49]

यहाँ नाटक के संवाद अपनी चरम सीमातक पहुँचे हुये दिखायी देते हैं। संवादों के ऐसे स्थलों पर शब्द चुप हो जाते है एवं बेकार तथा निरर्थक लगते है। मौन क्षण दर्शकों को मधुर शांति प्रदान करते हैं और दर्शकों का साधारणीकरण करनेमें सफल बनते है।यहाँ गोविंद चातक के विचार समीचीन हैं – विराम संवाद की चरम स्थिति है जहाँ शब्द चुक जाते हैं या व्यर्थ लगने लगते हैं। सुरेंद्र वर्मा ने संवादों के बीच विराम की स्थितियों को बहुलता से प्रयोग किया है।

च) <u>लघु और लंबे संवाद</u> – सुरेंद्र वर्मा ने अपने सभी नाटकों में कुछ अत्यंत लघु संवाद चित्रित किये है तो कुछ लंबे संवाद भी लिखे है लेकिन ये संवाद नाट्यानुकूल है। पात्रों की भावभंगिमा और कार्यव्यापार योग्य रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। "एक दूनी एक" नाटक के संवादों में "फिर" शब्द का पुनरूक्ति प्रयोग लघु संवादों में अपनी विशिष्टता रखता है।

औरत : "सोलह।

आदमी : फिर?

औरत : कुकर में चढा दूँगी।

आदमी : फिर?

औरत : पाँच मिनट में तैयार।"

आदमी : फिर?

औरत : खा लूँगी।

आदमी : फिर?

औरत : बिस्तर पर पहुँच जाऊँगी।

आदमी : फिर? सो जाऊँगी?"[50]

सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में पात्रों की मन:स्थिति और कार्यव्यापार को अभिव्यक्त करने के लिये लंबे संवादों की सार्थक योजना की है। "नायक खलनायक विदूषक" नाटक में कपिंजल और कुमारभट्ट "द्रौपदी" में सुरेखा, "आठवाँ सर्ग" का कालिदास, प्रियंगु "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" में ओक्काक और शीलवती के संवाद बहुत लंबे है। ओक्काक और शीलवती के संवाद तो डेढ-दो पृष्ठोंतक लंबे हैं। "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक के अंत में शीलवती का संवाद डेढ पृष्ठों का है। "नायक खलनायक विदूषक" में कपिंजल और कुमारभट्ट के संवाद लगभग एक पृष्ठों के हैं। "एक दूनी एक" में आदमी के संवाद बड़े हैं। "आठवाँ सर्ग" में संवाद की यह विशेषता है कि प्रियंगुमंजरी अपने अपमान बोध को आत्मनिवेदन शैली में अभिव्यक्त करने की अपेक्षा अन्य पुरूष में व्यक्त करती है। प्रारंभिक दो वाक्यों को छोडकर पूरा लंबा संवाद अन्य पुरूष में ही शब्दांकित हुआ है। – प्रियंगु : "(कोमल स्वर में) मुझे दूर रहने का दंड क्यों दे रहे हो?...मैंने क्या अपराध किया है?... (प्रगल्भ मुसकान से) प्रियंगु तो यहीं रहेगी ...तुम्हारे पास! जानते हो, प्रियंगु की जन्मकुण्डली कैसी है? उसमें लग्नस्थान में सूर्य है। तमालिका ने कहा था कि यदि अपने पति से दूर रहो न, तो बहो त लम्बे वियोग की आशंका है...याद है, तमालिका कौन है? कि भूल गये?...तमालिका प्रियंगु की अन्तरंग सखी है, श्रीमान्!

× × × ×

प्रियंगु को लेकर अपवाद फैलता है, तो तुम्हें भला लगता है? प्रियंगु लज्जित होती है, तो तुम सुख पाते हो? प्रियंगु का अपमान होता है, तो तुम्हारा स्वास्थ्य बढ़ता है?... कहो कि अब ऐसा नहीं करोगे? उसे अपने साथ ले जाओगे? ...चाहे उससे बात मत करना! देखना भी मत उसकी ओर! बस, बेचारी को अपने पास रहने देना!...(बायीं ओर आकर) जानते हो, प्रियंगु की एक बहुत बड़ी महत्त्वाकांक्षा क्या है? (कालिदास मदिरापात्र छूता है। उसे उठाता है।) तुम्हें तो पता है, प्रियंगु का जन्म नगर में हुआ है। प्रियंगु का पालन-पोषण नगर में हुआ है। प्रियंगु का जीवनयापन नगर में हुआ है।

× × × ×

छहों ऋतुओं का विवरण...जैसे मेघदूत के बहुत सारे अंश... और अब..."[51]

प्रियंगुमंजरी के उपर्युक्त संवादो में न केवल प्रियंगुमंजरी की मन:स्थिति का अंकन है बल्कि शिल्प के धरातल पर एक प्रकार की लयबध्दता है तथा आरोह अवरोह में प्रियंगुमंजरी की अभिनय का उच्चांक है। डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ल और कु. नीलम मलन्द के विचार समीचीन है। "सुरेंद्र वर्मा का संवाद कौशल उत्कृष्ट है। इन्होंने लंबे और छोटे दोनों प्रकार के संवादों का प्रयोग किया है। प्रेम प्रसंगों के संवाद अधिक छोटे, सरस, भावप्रबल वैचारिक हैं। गतिशीलता के कारण उनमें कहीं नीरसता नहीं आने पाई है।"[52]

6) <u>असंगत जीवन:असंबध्द संवाद</u> – सुरेंद्र वर्मा ने आज के असंगत जीवन को दो नाटकों में वाणी दी है। वे है – "द्रौपदी" और "एक दूनी एक"। द्रौपदी नाटक का एक प्रमुख पात्र मनमोहन है। वह चार नकाबवालों में विभाजित है उसका लाल नकाबवाला व्यक्तित्व सेक्स से संबंधित है। अतः अंजना और लाल नकाबवाला के बीच जो वार्तालाप होता है उसमें मनमोहन के गृहस्थी जीवन में जो टूटन आती है उस असंगति को निम्नांकित वार्तालाप के द्वारा दिखाया जा सकता है। आज के असंगत जीवन के असंबध्द वार्तालाप का यह उदाहरण देखिए :–

लाल नकाब वाला : "कौन है वो?

अंजना : बिज़नैसमैन।

लाल नकाब वाला : कहाँ?

अंजना : नैनीताल।

लाल नकाब वाला : कौन–कौन है घर में?

अंजना : दो बच्चे।

लाल नकाब वाला : बस?

अंजना : बस।

लाल नकाब वाला : बीवी?

अंजना : एक साल पहले ....

लाल नकाब वाला : मालूम कैसे पड़ा तुम्हें?

अंजना : उन्होंने इश्तिहार दिया था।

लाल नकाब वाला : काम?

अंजना : घर की सँभाल। बच्चों की देखभाल।

लाल नकाब वाला : उम्र?

अंजना : बच्चों की?

लाल नकाब वाला : नहीं। उन की।"[53]

"एक दूनी एक" नाटक में एक प्रेमी का अपनी प्रेमिका की तलाश करना और उसके संबंध में आदमी के साथ टेलीफोन पर पुछताछ करना बड़ा ही दर्द भरा व्यंग्य है। जहाँ प्रेमी अपनी प्रेमिका के जानकारी के लिये उत्सुक है वहाँ आदमी उसे गालियाँ देने के लिये उद्धत है। दोनों के बीच हुए वार्तालाप में आज के असंगत जीवन की विड़बना नजर आती है। निम्नलिखित वार्तालाप देखिए :–

आदमी : "हैलो...!

पुरूष स्वर : जैबुन्निसा को बुला दो।

आदमी : तुम पागल हो क्या?

पुरूष स्वर : पागल तो हूँ ही, जो चौदह सौ किलोमीटर दूर से माफी माँगने चला आ रहा हूँ।

आदमी : जाओ, माफ किया।

पुरूष स्वर : जेबुन्निसा से कहो, अनवर ने सलाम भेजा है।

आदमी : बेवकूफ, जाहिल, कमीने, कुत्ते...!

पुरूष स्वर : जेबुन्निसा को बुला दो।

आदमी : खटमल, मच्छर, प्रेमी, लुच्चे...!

पुरूष स्वर : जेबुन्निसा को बुला दो।

आदमी : कीड़े, मकौड़े, गुबरैले, लफंगे...!

पुरूष स्वर : जेबुन्निसा को बुला दो।

आदमी : कबाड़ी, कोढ़ी, निगोड़े, तिलंगे...!

पुरूष स्वर : जेबुन्निसा को बुला दो।"[54]

ज) <u>अदालती संवाद –</u>

सुरेंद्र वर्मा ने अपवादभूत अदालती संवाद का प्रयोग "नायक खलनायक विदूषक" नाटक में किया है। निम्नलिखित वार्तालाप देखिए –

चंद्रवर्धन : "गीता की शपथ लेकर कहता हूँ...

कुमारभट्ट : गीता की शपथ लेकर कहता हूँ...

चंद्रवर्धन : कि इस विवाद पर मैं जो कहूँगा...

कुमारभट्ट : कि इस विवाद पर मैं जो कहूँगा...

चंद्रवर्धन : वह मेरी अन्तरात्मा का निर्णय होगा...

कुमारभट्ट : वह मेरी अन्तरात्मा का निर्णय होगा

चंद्रवर्धन : केवल सच होगा...

कुमारभट्ट : केवल सच होगा...

चंद्रवर्धन : और सच के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होगा...

कुमारभट्ट : और सच के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होगा..."[55]

नाटकीय संवादो की दृष्टि से नाटककार का यह नया प्रयोग लक्षित होता है।

मनुष्य स्वतंत्रता से जन्म ले सकता है लेकिन जन्म लेने पर उसे हर क्षेत्र में शृंखलित होकर ही जीवन बिताना पड़ता है। मानो वह जीवनरूपी अदालत में अटकता रहता है। उपर्युक्त संवाद उक्त कथन का परिचायक है। इस प्रकार का अदालती संवाद चंद्रवर्धन और कर्पिजल के बीच भी हुआ है।

३) <u>वैज्ञानिक साधन और संवाद शिल्प</u> –

"द्रौपदी", "एक दूनी एक" नाटक में नाटककार ने संवादों के संप्रेषण के लिए मुख्यतया टेलिफोन और कम्पूटर का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है। "द्रौपदी" में मनमोहन का टेलीफोन पर संवाद देखिए –

मनमोहन : "हलो —

मैनेजर : मैं बोल रहा हूँ — मैनेजर?

मनमोहन : (नासमझी से) मैनेजर?

मैनेजर : रात को मेरे पास ट्रंक-काल आया है, डायरेक्टर का।"[56]

"एक दूनी एक" में टेलिफोन का बार-बार प्रयोग किया है। कम्प्यूटर को चिंतामणि की संज्ञा देकर उस के माध्यम से वार्तालाप का वैज्ञानिक प्रयोग किया है।

चिंतामणि : "बहुत चुप-चुप हो आज

आदमी : सुबह से बायें गाल के गड्ढेवाली की बहुत याद आ रही है।

चिंतामणि : संयुक्ता के यहाँ फोन क्यों नहीं करते? (आदमी चुपचाप कश लेता है। घूँट भरता है) रात कोई बुरा सपना देखा?

आदमी : (अनमन भाव से) रात-भर खर्राटे लेता रहा।

चिंतामणि : (कुछ ठहर कर) मीठी लगती है बीना की झंकार?

आदमी : पता नहीं।

चिंतामणि : कैसी भली लग रही है पायल की रूनझुन!"[57]

इस प्रकार सुरेंद्र वर्मा के नाटको के संवादों में विविधता है, मर्मस्पर्शता है, साधारणीकरण की स्थिति है। विविध प्रकार के संवाद पात्रानुकूल, भावानुकूल, प्रसंगानुकूल, नाट्यानुकूल है। इन संवादों को विभिन्न प्रयोगों के माध्यम से इस्तेमाल करने में नाटककार कामयाब हुआ है।

४(अ) <u>भाषा शिल्पगत प्रयोग</u> –

सुरेंद्र वर्मा के नाटकों की भाषा पात्रानुकूल है, सजीव है, संप्रेषणशील है। उन्होंने अपने नाटकों में भाषाशिल्प की दृष्टि से अनेक प्रयोग किये है।

अ) <u>पात्रानुकूल भाषाशैली</u> – सुरेंद्र वर्मा के सभी नाटकों में पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। चाहे वह पात्र पुरूष हो या स्त्री तथा किसी वर्ग का विशिष्ट प्रतिनिधि पात्र हो, सब में पात्रानुकूल शैली का अंतर्भाव बड़ी मात्रा में दिखायी देता है। "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक में पात्रानुकूल भाषाशैली का उदाहरण देखिए –

अभयसिंह : "(अब्दुल्ला खाँ से) कितने सौभाग्यशाली हैं आप, जो दिल्ली में रहते हैं।...लाल किले का ठाठ-बाट...दिवाने खास में आये दिन नाच-गाना...झिऊली में शेरों का शिकार...नित नये मेले, नित नये त्यौहार...

अजीत सिंह : (रूखाई से) दिल्ली में बस, रागरंग ही नहीं होता। कट्टर अनुशासन वाले सैनिक जीवन की शिक्षा भी दी जाती है।"[58]

आ) व्यंग्यात्मक भाषाशैली - सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में व्यंगात्मक भाषाशैली का भी सुंदर प्रयोग किया है। यह व्यंग्य भाषिक भी है और मानसिक भी है। पात्रों की मनःस्थिति के अनुसार प्रायः नाटककार ने व्यंग्यात्मक शैली को अपनाया है। "नायक खलनायक विदूषक" नाटक में सूत्रधार और विदूषक के माध्यम से व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया है।

सूत्रधार : "(व्यंग्य से) क्या आप के नियुक्ति पत्र में यह लिखा है कि आप अपनी इच्छा के अनुसार विदूषक की भूमिका नहीं करेंगे?

कपिंजल : क्या मेरे नियुक्ति-पत्र में यह लिखा है कि मुझे अपनी इच्छा के विपरीत हमेशा विदूषक की भूमिका करनी पडेगी?"[59]

"सेतुबंध" नाटक में प्रवरसेन की भाषा में कहीं-कहीं व्यंग्यात्मकता की पूट झलकती है जैसे "अगर बात उज्जयिनी के दूतों की है, तो निश्चय ही गोपनीय है...अपनी कार्यसिध्दि में बहुत चतुर होते हैं वे। जो प्रकृति से ही गजाकार और स्वभाव से ही गर्जनशील हैं...समय पडे, तो बिना किसी आहट के छोटी सी रत्नमंजूषा में आजीवन बंद रह सकते हैं।[60]

इ) प्रश्नार्थक भाषाशैली - नाटककार ने प्रश्नार्थक शैली का सुंदर प्रयोग किया है जिस में पात्रों का क्रियाव्यापार उनकी मानसिक स्थिति का द्योतक होता है। प्रश्नार्थक शैली के माध्यम से आदमी अपनी बेचैनी यहाँ स्पष्ट करता है - "जेबुन्निसा...तुम कहाँ हो, जेबुन्निसा?...क्या तुमने जानबूझ कर गलत नम्बर दिया है? यहाँ कोई तड़प रहा है तुम्हारे लिए..."[61]

"सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में प्रश्न करना और उसके साथ उत्तर भी देना वाक्यों की संरचना का एक अंग बन बैठा है। वाक्यों को उत्कर्ष तक पहुँचाने में सुरेंद्र वर्मा को अधिक सफलता मिली है। उदा. -

ओक्काक : "(मंद स्मित से) तो...? कैसी बीती रात?

शीलवती : (कसमसा कर, ठंडी साँस के साथ) पता ही न चला कि कब भोर हो गयी।...और तुम्हारी?"[62]

ई) चित्रात्मक भाषाशैली - "सेतुबंध" नाटक में प्रभावती के कथन में चित्रात्मकता देखने लायक है।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

जैसे – सिक्के पर चित्र होना चाहिए – ब्याह की वेदी पर मेरा बलिदान और नीचे सुनहरे अक्षरों में उपाधि प्रभावती–दमनकर्ता"[63] सुरेंद्र वर्मा ने "आठवाँ सर्ग" में कामदेव का चित्रात्मक शैली में वर्णन किया है। निम्नलिखित पंक्तियाँ देखिए – "जीवन को कामना और मोह देने के कारण काम को कल्याणकर भी कहते हैं।...और इसका यह भुवनमोहन रूप...वसन्त इसका सखा...कोयल इसकी वैतालिक...फूलों का धनुष...भौरों की पाँत की डोरी...आम्र–मंजरियों के बाण..."[64] "नायक खलनायक विदूषक" में भाषा के माध्यम से विदूषक पात्र की तनावभरी स्थिति को नाटककार ने हूबहू चित्रित किया है।[65] "सूर्य की पहली किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में चित्रात्मकता का सुंदर उदाहरण देखिये – शीलवती : "...कितना सुख दे सकता था यह शरीर...लेकिन मैंने नहीं जाना...वर्षा पर वर्षा बीतते गये...मेरे दिन की दिनचर्या कभी नहीं बदली"[66] इसमें भाषा उन्मादक, भाव उत्तेजित होकर भी कहीं पर अश्लीलता नहीं दिखाई देती है। भाषा में हूबहू चित्र रेखांकित करने की शक्ति नाटककार में देखने को मिलती है।

उ) <u>काव्यात्मक भाषा शैली</u> – काव्यात्मक भाषाशैली के उदाहरण कम हैं लेकिन अनूठे हैं। "आठवाँ सर्ग" नाटक के प्रारंभ में कीर्तिभट्ट के वार्तालाप से नाटककार ने काव्यात्मक भाषा का रोमांटिक प्रयोग किया है। "स्वामी से इतना कहा कि राजधानी से पचास कोस दूर उस कुटीर में जाने की क्या विवशता है? यहीं रहकर अपने महाकाव्य का आठवाँ सर्ग पूरा कर लीजिए...लेकिन नहीं!...राजधानी में कोलाहल होता है...हर दिन गोष्ठियाँ और सभाएँ की जाती हैं। लोग भेंट के लिये आते हैं। ... अवकाश नहीं मिलता। मन एकाग्र नहीं हो पाता।...अब कौन समझाए कि राजधानी है तो उसमें कलरव–क्रन्दन तो होगा ही।...जल में तरलता नहीं होगी? सूर्य में ताप नहीं होगा? (प्रियवंदा को एकटक देखते हुए) कुमारी कन्या के सौन्दर्य में हृदय को व्याकुल बनाने वाला आकर्षण..."[67]
काव्यात्मक भाषा शुष्क परिवेश को कमनीयता प्रदान करती है।

ऊ) <u>बिंबात्मक भाषा शैली</u> – "आठवाँ सर्ग" नाटक की भाषा में बिंबात्मकता उभर उठी है। उदा. अनसूया : सब लोग मंत्रमुग्ध से सुन रहे थे –– श्लोक के बाद श्लोक और पृष्ठ के बाद पृष्ठ..."[68] प्रियंगु के शब्दों में बिंबात्मकता का उत्कृष्ट उदाहरण देखिए – "तुम पन्ने पर पन्ने पलटते जाओगे और श्रोता जैसे दर्शक बनकर पति–पत्नी की उन्मुक्त प्रणय–लीला देखेंगे...यौवन के उष्ण रक्त में ज्वार आने के चित्र...उत्तेजना और उन्माद और तृप्ति के लिये आरोहावरोह...दो शरीरों के एक–दूसरे में समा जाने के दृश्य...मैं वहीं बैठी रहूँगी, चुपचाप सिर झुकाए..."[69] "द्रौपदी" नाटक में मनमोहन के साथ चार नकाबवाले सुरेखा से उसके पति होने का दावा करते हैं और सुरेखा कान बंद करके चीख उठती है।[70] यह बिंब यहाँ नाटक की दृष्टि से अपूर्व उपलब्धि है। "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में यौन बिंबों को मनोविज्ञान के धरातल पर बड़े मार्मिक शब्दों में

चित्रित किया है। नाटक के तीसरे अंक में आर्यप्रतोष के साथ काम सुख का अनुभव कर शीलवती ओक्काक के राजप्रासाद में आती है तब ओक्काक की धज्जी उड़ाती है और अपनी पुरानी काम पीडा का यथार्थ वर्णन-बिंब प्रस्तुत करती है। शीलवती के शब्दों में - "यह शयनकक्ष साक्षी है मेरी पीड़ा का... ये भित्तियाँ और गवाक्ष...यह मुक्तालाप...(छोटा सा विराम) यह शैया...तुम मेरे शरीर से ताप लेना प्रारंभ करते थे...नग्न नारीत्व से अपने पुरूषात्व को जाग्रत करना चाहते थे-- आलिंगनों से, चुंबनों से, स्पर्शों और नखचिन्हों से ...मेरी पूरी चेतना प्रत्युत्तर देती थी...मेरी साँसे अंवरूद्ध, मेरी धड़कने तीव्र...मेरे होंठों पर सीत्कार...मेरे अंगप्रत्यंग में कँपकँपाहट की तरंगें — मैं पूरी तरह तैयार ... पके फल की तरह टूट पड़ने को, उमडते ज्वार की तरह बाँध तोड़ देने को, भरे मेघों की तरह बरस पडने को ...और प्यासी धरती की तरह एक-एक बूँद अपने में समा लेने को...उस मात्रा में मैं एक-चौथाई दूरी तय कर लेती और मुड़ कर देखती तो तुम वहीं खड़े थे-- ठंडे, निस्तेज..."[71] यद्यपि आज का मानव टूटा हुआ है, उसके गृहस्थी जीवन के टुकडे टुकडे हुये दिखायी देते हैं फिर भी मानव स्वभाव सुलभ गृहस्थी जीवन के प्रति बड़ा ही आकर्षण रहता है। गृहस्थी जीवन को बिंबात्मक शैली में व्यक्त करने में सुरेंद्र वर्मा कामयाब हुये हैं। "एक दूनी एक" नाटक के आदमी के शब्दों में - "अगर शहनायां न होती, तो इस सरजमीन के चप्पे-चप्पे पर पागलखाने होते। यह बेवकूफ, जाहिल आदमी कैसे भरता है अपने अन्दर का बेपनाह खालीपन?... वो सिर्फ चूडियों की खनक और गुड़िया-पप्पू की तोतली बोली है, जो उसे जान और दिशा देती है। वो दफतर के काम में गहरे डूबता है— घर की खातिर। इंक्रीमेंट से लौ लगाता है—घर की खातिर।...वो दफतर से जल्दी वापस लौटता है, पप्पू को पेन्सिलें देनी हैं, गुड़िया को घुम्मी कराने ले जाना है,...कल गुड़िया का कनछेदन है, परसों पप्पू का मुंडन है।...गुड़िया को मैडिकल में जाना है, पप्पू को पायलट बनना है।"[72] गोविंद चातक के भाषा के बारे में विचार समीचीन हैं। "सुरेंद्र वर्मा की भाषा की एक और विशेषता भी है और वह कुछ स्थलों पर विवरण का विस्तार और उससे एक सार्थक बिंब विधान।"[73]

ए) <u>प्रतीकात्मक भाषा शैली</u> - "द्रौपदी" की भाषा में सर्जनात्मकता है। भाषा की प्रतीकात्मकता और सांकेतिकता अनेक दृश्यों को हूबहू व्यंजित करती है। "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक में भी प्रतिकात्मकता के सुंदर उदाहरण दिखायी देते है। जैसे - "ओक्काक : ओह...! चारों जागेंगे सारी रात...चक्रवाक...मैं...कुमुदिनी...और चंद्रमा...।"[74] नाटककार ने "चक्रवाक" और "मैं" शब्दों द्वारा विरह का प्रतीक व्यक्त किया है और "कुमुदिनी" और "चंद्रमा" के द्वारा मिलन का।

ऐ) <u>मुहावरेदार भाषाशैली</u> - सुरेंद्र वर्मा ने अपने सभी नाटकों में आवश्यकता के अनुसार मुहावरेदार भाषाशैली का सुंदर प्रयोग किया है। उदा. कब्जा करना, साँस का टूटना, ख्वाब का टूटना मुकाबला करना, दफन करना, शिकार बनना, खुन पीना (छोटे सैयद बड़े सैयद) छूने की एलर्जी, कान फूँकना,

होमवर्क करना (एक दूनी एक) आदि मुहावरों का प्रयोग किया है।

औ) पूर्वदीप्ति शैली – सुरेंद्र वर्मा के "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक", "द्रौपदी", "छोटे सैयद बड़े सैयद", "एक दूनी एक" नाटक में पूर्वदीप्ति शैला का प्रयोग दिखाई देता है शीलवती के विरह में तड़पते ओक्काक को अपने बाल्य जीवन की याद एकांत में आती है।(पृ. 42) अब्दुल्ला खाँ को प्रारंभिक जीवन की याद आती है। (पृ. 154) सुरेखा और मनमोहन को अपने बच्चों के बचपन की याद आती है। (पृ.105) पूर्वघटित अतीत के अनुभवों की स्मृति में जीना सुरेंद्र वर्मा के भाषा की एक विशेषाता है। "एक दूनी एक" नाटक में सुरेंद्र वर्मा ने प्रियकर-प्रेयसि के पत्रों के माध्यम से भी पूर्वदीप्ति शैली का अनूठा प्रयोग किया है। उन दोनों की भावभंगिमाएँ यहाँ चित्रात्मक शैली में अभिव्यक्त होती हैं। ये पत्र आदमी पात्र पढता है। पत्र पठनद्वारा पूर्वदीप्ति शैली का यह एक नया प्रयोग देखिए:-

आदमी : चन्दर, मेरी रूह "डोवर" में दो घंटे इंतजार किया मैने। तुम नहीं आये। कई बार ऑफिस फोन किया। तुम न मिले। यह क्या हो हो रहा है...तुशी।...(दूसरा) तुशी, मेरे दिल की धड़कन! यकायक संदेश आया कि जहाज आ गया है। माल उतारने डॉक पर जाना पड़ा। शाम वहीं हो गयी। सारी रात तड़पता रहा...। चन्दर।...(तीसरा) चन्दर, मेरा नशा, कल की शाम अभी तक मेरी साँसों में महक रही है। तुम्हारे तपते हुए चुम्बन मेरे जिस्म पर फूल की तरह खिल उठे हैं।...तुशी।...(चौथा) तुशी, मेरी खुशी, तुम जब से बाँहो में आयी, तो मालूम हुआ कि जिंदगी कितनी खूबसूरत है...(पाँचवाँ) चन्दर मेरे तरन्नुम, मैं दरबर टी.टी. पर मिलूँगी — ठीक ग्यारह बजे। शिव जयंती को शाम छह-सात बजे तक मुझे वापस आ जाना चाहिए।...कितने-कितने प्यार के साथ तुशी...(छठवाँ) मेरी अपनी तुशी,...तुम्हारे मेंहदी-रचे पाँवों का मुन्तजिर चन्दर...।"[75]

निसंदेह पूर्वदीप्ति शैली का यह अनूठा प्रयोग है।

औ) विभिन्न शब्द प्रयोग – संस्कृत शब्द प्रयोग – कुसुमस्तवक, काष्टपेटिका, रत्नमंजुषा, स्नेहभाजन (सेतुबंध) भित्तियाँ, गवाक्ष, आसन, मदिराकोष्ठ, शृंगारकोष्ठ, लाक्षारस, (आठवाँ सर्ग) अन्तःपूर, कुचुकी, उत्सव, मदिरा, चषक (सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक) संस्कृत शब्दों का प्रयोग नाटककार ने इस प्रकार किया है। अरबी-फारसी शब्द प्रयोग – अरबी-फारसी शब्दों का उत्कृष्ट प्रयोग "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक में किया है। कुछ शब्द दृष्टव्य हैं – वज़ीर, मुर्शिद, रियासत, जहाँपनाह, खुद्दारी, सल्तनत, ओहदा, एहसास, कयामत, बेताब "एक दूनी एक" नाटक में उर्दू शब्दों का प्रयोग देखिए – शख्सियत, झूलूस, पेशकश, दलील, जुमला, एहसास, खूँखार, गलतफहमी, इत्तिफाक, एहतियान, परहेज आदि डॉ. दूबे के शब्दों में – "छोटे सैयद बड़े सैयद में फारसी निष्ठ उर्दू शैली का प्रयोग किया है। उत्तर मुगलकाल के अस्थिर राजनीतिक स्थिति को नाटकीय कौशल के साथ

प्रस्तुत किया है।"[76] अंग्रजी शब्द प्रयोग – प्रणय दृश्यों में अंग्रजी शब्दों का प्रयोग आधुनिक युगबोध का परिचय देते है। उदा. क्लास, थ्योरी, प्रैक्टीकल आदि। रैस्टो कैमिकल्स, हैड ऑफिस, मैनेजर, सीनियर असिस्टेंट, रिसीवर, ट्रंक-काल, (द्रौपदी) होमवर्क, कम्प्यूटर, टेप-रिकार्डर, टेबिल-लैंप, क्यूपिड डिटेक्टिव एजंसी (एक दूनी एक) आदि शब्दों का प्रयोग किया है। कन्नड शब्द प्रयोग – सुरेंद्र वर्मा ने अबतक के नाटकों में अरबी, फ़ारसी, अंग्रजी, संस्कृत, भाषाओं का जरूर प्रयोग किया था। परंतु एक दूनी एक नाटक में कन्नड भाषा का प्रयोग करके नया प्रयोग किया है। उदा. सिगरेट्टा कणियम मणिअट्टा ओडिलगम। काम संबंधी शब्द प्रयोग – कामसंबंधी शब्दों के प्रयोग उन्होंने अपने सभी नाटकों में किये है। उदा. कजरारी आँखे, ओठ, उन्माद, उत्तेजना, नारित्व, पुरूषात्व, शैय्या, कामतृप्ति, नखचिन्ह, अवरूध्द साँसे, तीव्र धड़कन, अंगप्रत्यंग में कँपकँपाहट, नग्न नारीत्व, सम्मोहन आदि। ऐतिहासिक शब्दप्रयोग – महाबलाधिकृत, राजपुरोहित, राजमहिषी, राजवैद्य, ताम्रपट, शिलालेख, हुक्मनामा, सरदेशमुखी, ओहदा, गिरफतार, वादा खिलाफी, सालहासाल आदि। सुरेंद्र वर्मा ने कालिदास के मुँह से नाट्य भाषा के बारे में बड़े ही मार्मिक विचार व्यक्त किये हैं। उनका कथन है – "रचनाकार कभी वैयाकरणों की कट्टरता से नहीं बंधता बल्कि अपनी दृष्टि से भाषा का संस्कार देता है।"[77]

(आ) गीत संरचनात्मक प्रयोग –

"छोटे सैयद बड़े सैयद" और "एक दूनी एक" नाटक में गीत संरचनात्मक प्रयोग किये है। लेकिन ये गीत नाटक की कथावस्तु को विकसित करने के लिये, पात्रों के चरित्र चित्रण को उद्घाटित करने के लिये मुख्यतया व्यंग्यात्मक रूप में प्रस्तुत किये गये हैं। अतः परंपरागत गीत रचना की अपेक्षा इन नाटकों के गीत नवीन प्रयोगधर्मिता के सूचक हैं। "छोटे सैयद बड़े सैयद" में कुल 12 गीत है और "एक दूनी एक" में 6 गीत हैं। देवेंद्र कुमार गुप्ता ने ठीक ही कहा है – "वस्तुतः सुरेंद्र वर्मा के "छोटे सैयद बड़े सैयद" के गीतों की परिकल्पना "टोटल थियेटर" की परिकल्पना को साकार रूप देने के लिये महत्त्वपूर्ण भागीदार की भूमिका निभाते है।"[78] "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटक में नाटककार ने गीतों का अधिक सार्थक प्रयोग किया है। गीत नाटक की कथा को प्रवाहित बनाते हैं। गीतों में खास पैनापन है, गीत दिलचस्प हैं और प्रभावपूर्ण भी हैं। इन गीतों की खासियत यह है कि ये गीत तत्कालीन मुगल परिवेश का हूबहू चित्र पाठकों के सामने रखते हैं। ये गीत तत्कालीन परिवेश में आधुनिक संदर्भों और परिस्थितियों पर तीखा व्यंग्य करते हैं। भाँड, नक्काल और बहुरूपियों के गीतों का सार्थक प्रयोग कर के नाटककार ने गीत की दिशा में नया प्रयोग किया है। ये गीत नाटक की कथावस्तु के साथ घुलमिल गये हैं और ये गीत नाटक की संरचना का एक भाग बन बैठे हैं। उदा.

भाँड, नक्काल और
बहुरूपिया : (समवेत) अब्दुल्ला और अलीहुसैन

लूटा हिंदुस्तान का चैन
काँख दबाया तख्तोताउस
जेब में रक्खा लाल किला
दारूल्मुल्क हथेली पर है
शाह जरे जूती किब्ला
कल का कैदी, आज शहंशाह,
शहंशाह को किया हलाल
तख्ते से ले आय तख्त पर
वापस भेजा बिला मलाल
शाह बनाये, शाह मिटाये
सुबह उठाये, शाम गिराये"[79]

सुरेंद्र वर्मा ने छोटे सैयद बड़े सैयद नाटक में गीतों के माध्यम से यह भी दर्शाया है कि जो शायर गीत लिखते हैं, गाते हैं उनका भी शोषण तत्कालीन राजनीति करती थी जिसके वजह से शायर भी उब जाते थे। ऊबे हुए शायर का निम्नलिखित गीत देखिए –

शायर : (ऊबा हुआ)

"ये जश्नेतमन्ना मुबारक मुबारक
ये फतह का तम्हा मुबारक मुबारक...
ये तख्तेमुगलिया सलामत सलामत,
ये एहसासे शांदा मुबारक मुबारक...
ये रौशन दरीचे, ये दिलशाह कूचे,
हरेक सिम्त ये रंगो बू के बगीचे"[80]

इतना ही नहीं अब्दुल्ला खाँ और हुसैन अली तथा दिल्ली के दरबारीयों को देखकर शायर हडबडा जाता है हड़बड़ाकर घबरे हुए शायर की मन:स्थितियों को निम्नलिखित काव्यपंक्तियों में देखा जा सकता है: –

"फिजाओं में नग्में, हवाओं में नौबत,
गुलों में नजाकत औ गुंचों में रंगत
ये दिल्ली की गलियाँ सलामत सलामत,
हसीं रंगरलियाँ मुबारक मुबारक।"[81]

सुरेंद्र वर्मा ने "एक दूनी एक" नाटक में बीच-बीच में गीतों का सार्थक प्रयोग किया है। गीतों से प्रस्तुत पात्रों की विरहावस्था का चित्रण कहीं-कहीं पर मिलता है।जैसे :-

आदमी : "हमें छोड कर चले गये तुम एक बरस पहले
आँखों के आगे वो मंजर पल-पल दिल दहले
छह हफ्तों का साथ हमारा, पल भर में टूटा
सतरंगा, गुलजार घरौंदा शीशे-सा टूटा
हाय, तुम्हारे बिन अब यह जग जाता नहीं सहा
वर्सोवा की राजहंसिनी, सागर नैन बहा
नहीं, नीचे कोई नाम नहीं चाहिए...वो समझ जायेंगी यह कौन
दुःखी आत्मा है...।[82]

प्रिया के बिना रह जाना कितना कठिन होता है इसकी अनुभूति ठंडी साँस भरे हुए आदमी अभिव्यक्त करता है। जैसे -

आदमी : (ठंडी साँस से) पायल, सपना, बीना
खून के आँसू पीना
कैसा मुश्किल जीना
पल-छिन, बरस-महीना।"[83]

सुरेंद्र वर्मा ने अपनी वात्सल्यपरक भावना को चिंतामणि के माध्यम से व्यक्त किया है। यह विडंबन काव्य है। जैसे -

चंदा मामा कौन? गुलिया
के माथे की बिंदी है
भोली गुलिया, प्याली गुलिया
आँखों में कुछ निंदी है
ठुम्मक-ठुम्मक चलती है
बोतल भल दूददू पीती है
चिलिया वाला गाना गा
मम्मी को पप्पी देती है।"[84]

प्रस्तुत गीतों को पढ़ने से पता चलता है कि नाटककार का कवि रूप यहाँ उभर आया है। वास्तव में सुरेंद्र वर्मा नाटककार ही नहीं तो कवि भी हैं। लेकिन उनका कवि कोरा कवि नहीं, आज के जीवन का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने वाला एक चितारा है। आधुनिक युग के नाटकों में गीतों के प्रयोग कम होते जा रहे है परंतु यहाँ नाटककार ने पात्रों की अभिव्यक्ति को सशक्त और सबल बनाने के लिये गीतों का प्रयोगशीलता के तौर पर प्रयोग किया है। इन गीतों से नाटक मे परिवेश में जिंदापन आया है।

प्रस्तुत गीतों से नाटककार ने आधुनिक युग की छटपटाहट एक नये ढंग से चित्रित की है। प्रत्येक नाटककार की अपनी-अपनी भाषाशैली होती है। सुरेंद्र वर्मा की भी भाषाशैली उनके व्यक्तित्व का परिचायक है और उसमें विविध प्रयोगों की क्षमता है।

5) प्रतीकात्मक-बिंबात्मक प्रयोग –

सुरेंद्र वर्मा के "सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक" नाटक के प्रतीक आत्यंतिक सरल और भाव संप्रेषित हैं। इन प्रतीकों के माध्यम से तत्कालीन परिवेश पर प्रकाश पडता है। इस नाटक में ओक्काक के अन्तर्द्वन्द्व को अभिव्यक्त करने के लिये मदिरापान का रंगप्रतीक अनेक बार प्रस्तुत हुआ है। प्रथम अंक में ओक्काक का मदिराकोष्ठ तक जाना, पात्र उठाकर चषक में ढालना[85] दूसरे अंक में "ओक्काक का मदिरा कोष्ठतक जाना, चषक भरना, कुछ घूँट लेना"[86] आदि के द्वारा ओक्काक के संघर्षमयी द्वंद्वग्रस्त मनःस्थिति पर प्रकाश पडता है।

नाटककार ने "चक्रवाक पक्षी" की ध्वनि का प्रतीक लेकर ओक्काक की झुलाहट को प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में सफलता पायी है। ओक्काक : "ओह...! (गवाक्ष तक आ जाता है। धीरे धीरे) चारों जागेंगे सारी रात...चक्रवाक...मैं...कुमुदनी...और चंद्रमा...।"[87] कुमुदनी और चंद्रमा के प्रतीक द्वारा ही मिलन की बेला पर और चक्रवाक और मैं के द्वारा विरह की बेला पर प्रतीकात्मक ढंग से सोचने का प्रयत्न किया है। शीलवती का उपपति के सानिध्य में रहना, ओक्काक का अकेला रात काटना आदि बातों से महत्तरिका ओक्काक की मनःस्थिति पर सांकेतिकता के साथ प्रकाश डालते हुए महत्तरिका कहती है – "चक्रवाक पक्षी है महाराज!...महादेवि के हाथ से मृणाल का रस नहीं मिला, उनका स्वर नहीं सुना, इसलिए व्याकुल है।"[88] पूरे नाटक में रात का बिंब उभरता है। जिससे एक ओर यौन संबंधों का प्रतीक बनकर दर्शकों को कुरेद लेता है, सोचने के लिये बाध्य करता है। यहीं पर ओक्काक का अकेलापन, नियति की भयावहता और अंधःकारमयीता को संप्रेषित करता है।

सुरेंद्र वर्मा का "द्रौपदी" प्रतीक की दृष्टि से एक नया प्रयोग है। द्रौपदी नाटक में मनमोहन एक प्रतीकात्मक पात्र है। मनमोहन उसका सशरीरी रूप है तथा पीले नकाबवाला, लाल नकाबवाला, काले नकाबवाला, सफेद नकाबवाला उसके खण्डित व्यक्तित्व के प्रतीक रूप हैं। पीले नकाबवाला रैस्टो केमिकल कंपनी के उच्चपद प्राप्ति के एहसास का प्रतीक है। लाल नकाबवाला उसके स्वच्छंद, अमर्यादित यौनसंबंध का प्रतीक है। काला नकाबवाला उसकी बुराइयों का प्रतीक है और सफेद नकाबवाला मनमोहन के सभ्य, शिक्षित, सद्वृत्तियोंवाला उज्वल व सुसंस्कृत व्यक्तित्व का प्रतीक है।[89]

नाटक के प्रारंभ में सुरेखा को महाभारतकालीन द्रौपदी के रूप में प्रतीबिंबित किया गया है। सुरेखा के आत्मकथन के पश्चात चारों नकाबवाले इकट्ठे आकर एकसाथ गुस्से में कहते है:-

चारों नकाब वाले : "लेकिन हमें आपत्ति है। (सुरेखा चौंक कर मुड़ती है।)

सफेद नकाब वाला : यदि इन्हें एक ही नाम से पुकारा जायेगा —

काले नकाब वाला : तो हमारी संज्ञा क्या होगी?

लाल नकाब वाला : कुछ भी नहीं

पीले नकाब वाला : तब तो बड़ा भ्रम होगा।"[90]

यह एक अपूर्व बिंब की उपलब्धि है। नाटककार ने इस नाटक में मनमोहन के चार नकाब, सुरेखा का द्रौपदी के रूप में चित्रित करना आदि जगहपर दृश्यात्मक की सहायता से बिंबात्मकता को वाणी देने का प्रयत्न किया है। डॉ. लक्ष्मीराय के मतानुसार – "मनमोहन का व्यक्तित्व घर और बाहर कई टुकडों में विभाजित है। उसके जीवन की परिस्थितियाँ और आवश्यकताएँ उसे मुखौटा बदलकर जीने के लिये बाध्य करती दिखायी देती हैं।"[91] इस नाटक के स्वप्नचित्रों में बिंबग्राहिता लक्षणीय है।

6. <u>शीर्षकों के अभिनव प्रयोग</u> –

सुरेंद्र वर्मा की प्रयोगधर्मिता उनके नाटकों के शीर्षकों में भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। उनके हर एक नाटक का शीर्षक एक-एक नया प्रयोग ही है। नाटक का शीर्षक "सेतुबंध" मिथकीय लगता है। रामायण में प्रभु रामचंद्रजी ने बंदर सैनिकों की सहायता से लंकातक पहुँचने के लिये और रावण की कचोट में फँसी हुई सीता को मुक्त करने के लिये सेतु बांधा था। परंतु यहाँ पर वर्णित सेतु इस राम के सेतु की भांति नहीं है बल्कि यह सेतु पति-पत्नी के संबंधों को जोडनेवाला है।[92]

प्रवरसेन को लगता है कि मैं एक शक्तिशाली शासक होने के कारण, साहित्यिक संस्थायें मुठ्ठी में होने के कारण, कालिदास से मेरा भावात्मक लगाव होने के कारण, कालिदास के ज्येष्ठ का पुत्र होने के कारण, कालिदास के नीरस वर्तमान को उनकी सरस भावना से जोडने के कारण, मेरा महाकाव्य उत्कृष्ट घोषित किया गया होगा। उसके मन की हीनग्रंथी और भी सजग होकर उसे कुण्ठित बनाती है। वह खुद को पिता की तरह एक औसत व्यक्ति मानने लगता है और अधिकतर नेताओं के समान खुद के सेतु को आधा या चौथाई या तिहाई मान लेता है।

राम ने सेतु की सहाय्यता से अपनी पत्नी सीता को प्राप्त किया था परंतु यहाँ सेतु तो है परंतु पति-पत्नी के संबंधों को जोडने की अपेक्षा वह उन्हें (संबंधोंको) और भी गहरा बनाकर तोड़ देता है। इस दृष्टि से यदि मिथकीय प्रयोग से युक्त शीर्षक होकर भी इस शीर्षक में मिथक की अपेक्षा आधुनिक जीवन में स्थित पति-पत्नी के जीवन के अलगाव को, तनाव को चित्रित करने का प्रयत्न अन्तर्भूत है। यहाँ नाटक का शीर्षक "सेतुबंध" उपहासात्मक, प्रतीकात्मक तथा आधुनिक जीवन सन्दर्भ से युक्त है। यह शीर्षक आकार में जितना छोटा है, उतना ही आकर्षक, अन्वर्थक है।

"आठवाँ सर्ग" दो शब्दों का एक छोटासा और अर्थबध्द सार्थक शीर्षक है। शीर्षक गणिती

लगता है। इसमें संख्या का बोध होता है। नाटककार ने यहाँ प्रारंभिक सात सर्गों का विवरण पेश किया है और आठवें सर्ग में महादेव की ओर से हिमालय के पास उमा के साथ विवाह का प्रस्ताव आता है। आठवें सर्ग में उमा और महादेव का विवाह होता है। इसमें शिव-पार्वती की रतिज क्रीडा को कालिदास ने स्वच्छंदता से चित्रांकित किया है। उन्होंने इस वर्णन में अपने विवाहोत्तर प्रेमसंबंध की अभिव्यक्ति को अनुभवजन्य रूप में चित्रांकित किया है। परिणाम स्वरूप आठवें सर्ग की कथा को सुनने के बाद धर्माध्यक्षों ने उसपर अश्लीलता का आरोप लगाया है और इससे कालिदास के सम्मान समारोह में रुकावटें पैदा की गयीं।

कालिदास को "कुमारसंभव" के आठ सर्गों को पूरा करना था परंतु उसकी यह चाह अधूरी ही रह गयी। कुमारसंभव के आठवें सर्ग को वे पूरा नहीं कर सके। अर्थात "आठवाँ सर्ग" इस रचना का केंद्र बिन्दु ही था। परिणामतः उसे राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक दबाव के कारण पूरा न कर सकने की वजह से अपनी अतृप्ति को मुखर बनाने के लिये सुरेंद्र वर्मा ने कालिदास की इस अतृप्ति के परिणाम स्वरूप इस नाटक का नाम "आठवाँ सर्ग" रखा है। सुरेंद्र वर्मा को भी यहाँ आठवें सर्ग के बारेमें अधिक आसक्ति है, ऐसा प्रतीत होता है। नाटक का शीर्षक नायक, नायिका अथवा नाटक की केंद्रीय कल्पना आदि के आधारपर किया जाता है। परंतु यहाँ रचना के सर्गों के आधारपर और वह भी अधूरी होने के कारण आठवें सर्ग के आधार पर नाटककार ने शीर्षक की परिकल्पना कर के शीर्षक की दृष्टिसे एक नया प्रयोग पाठकों के सामने रखा है जिसमें ऐतिहासिकता है, कुतूहलता है और पाठकीय संवेदना को जागृत करने की क्षमता है।

नाटक का शीर्षक "नायक खलनायक विदूषक" तीन मानवी प्रवृत्तियों का मनोहर संगम लगता है। प्रायः हर मनुष्य में नायक, खलनायक और विदूषक - तीन प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं। नाटककार ने यहाँ इस शीर्षक के माध्यम से यह बताने का प्रयत्न किया है कि चाहे नायक हो, खलनायक हो या विदूषक - तीनों अपने-अपने स्थानपर महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें से एक का भी अभाव हो जाय तो नाटक नीरस बन जाता है। अर्थात नाटक को सरस बनाना है तो इन तीनों की समान आवश्यकता है। इस कथन को पुष्ट करने के लिये नाटककार ने दुष्यंत का उदाहरण देकर शीर्षक की सार्थकता अधिक स्पष्ट की है। कण्व के आश्रम में शकुंतला से प्रेम करनेवाला दुश्यंत "नायक" के रूप में दिखायी देता है। जब हस्तिनापुर में अपनी गर्भवती पत्नी शकुंतला को अकेली छोड़ देता है तब वह "खलनायक" लगता है और जब अंत में शकुंतला के पैरों गिर-गिर कर क्षमायाचना करता है तब उसकी स्थिति "विदूषक" जैसी लगती है। यही उदाहरण इस नाटक के शीर्षक के लिये समीचीन है।

प्रस्तुत नाटक का एक प्रमुख पात्र कपिंजल हमेशा विदूषक की भूमिका करने से ऊब जाता है और वह अन्य भूमिकाएँ निभाने की इच्छा अपने अन्य रंगधर्मियों के सामने व्यक्त करता है। उस समय

उसे कुमारभट्ट समझाता है कि सभी भूमिकाएँ महत्त्वपूर्ण होती हैं और प्रत्येक अभिनेता को अपनी विशिष्ट भूमिका निभाने के कारण प्रतिष्ठा प्राप्त होती है और वह अपनी जिंदगी गुजर सकता है। हरएक की प्रवृत्ति भिन्न होती है। अतः नाटक का शीर्षक तीन शब्दों में विभाजित है.और ये तीनों शब्द एक दूसरे की प्रकृति के खिलाफ हैं। शीर्षक वास्तव में लंबा चौड़ा है फिर भी मार्मिक और कथासार का आशय केंद्रित करनेवाला है। नाटककार ने इस शीर्षक के माध्यम से अपनी प्रयोगशीलता, बौध्दिकता का पूरा परिचय पाठकों को कर दिया है।

नाटक का शीर्षक "सूर्य की पहली किरण से सूर्य की अंतिम किरण तक" एक विशिष्ट शीर्षक है। शीर्षक पर निगाह डालने से सर्वप्रथम यह दिखायी देता है कि शीर्षक बड़ा लंबा है। साधारणतया यह धारणा रही है कि शीर्षक छोटा हो लेकिन नाटककार ने शीर्षक लंबा रखकर शीर्षक के आकार के क्षेत्र में एक नया प्रयोग किया है। इस शीर्षक में नवीनता स्पष्ट रूप से नजर आती है। परंपरागत शीर्षक से यह शीर्षक भिन्न है। इस शीर्षक के मुख्य दो भाग हैं। (1) सूर्य की अंतिम किरण और (2) सूर्य की पहली किरण/सूर्य की अंतिम किरण का मतलब है – सूर्यास्त का समय और सूर्य की पहली किरण का मतलब है – सूर्योदय का प्रारंभ। पूरे नाटक का कार्यव्यापार समय का व्यवधान रखता है। पूरे नाटक में सूर्यास्त से सूर्योदय तक की घटनाओं का चित्रण है और इस दृष्टि से नाटककार ने नाटको के अंकों का विभाजन भी किया है। सूर्यास्त के प्रारंभ में नाटककार ने उत्तराधिकारी की समस्या खड़ी कर के नपुंसक राजा ओक्काक की मनःस्थिति को तथा शीलवती के उपपति चुनाव तक की घटनाओं को चित्रित किया है। तत्पश्चात नाटककार ने दूसरें अंक में रात्रि के मध्यान्ह के विभिन्न प्रहरों को ध्यान में रखकर एकाकीपन में ओक्काक की मानसिक रूग्णता, विक्षिप्तता आदि को चित्रित किया है और उसी रात में शीलवती और आर्यप्रतोष का मिलन दिखाकर शीलवती के कामसुख आनंद को व्यक्त किया है। नाटक के तीसरे अंक में सूर्योदय का प्रारंभ दिखाकर नाटककार ने शीलवती को अपने राजप्रासाद में वापस लौटाया है और उस समय शीलवती एक कामान्ध स्त्री के रूप में प्रस्तुत की गयी है। मातृसुख को भी धिक्कारकर कामसुख को सबकुछ माननेवाली वह एक आधुनिका बन जाती है और पूरा नाटक यहाँ समाप्त होता है। अतः नाटक की कथावस्तु की नियोजना नाटक के पात्रों की मनःस्थिति और कार्यव्यापार आदि को समय के व्यवधान में बांधकर नाटककार ने नाटक का शीर्षक दे दिया है जो परंपरागत शीर्षक से हटकर एक प्रयोगात्मक शीर्षक है।

इतना ही नहीं, नाटक का शीर्षक गणितीय है, उसमें चौरसपन भी है। इस नाटक के शीर्षक के बारे में रामगोपाल बजाज का वक्तव्य समीचीन है।

"इन दो पंक्तियों को सूर्य की अंतिम किरण से

सूर्य की पहली किरण तक

गौर से देखे तो गणितात्मक आवृत्ति और एक चौरसपना है वाक्य के स्वरूप में जब कि ध्यान और अर्थ में काव्यात्मकता है। वैसे तो "बात एक रात की" कहा जा सकता है। रात के साथ जुड़ी दूसरी ध्वनि यौन-बिम्ब धारण करती है।"[83] उक्तिवैचित्र्य की दृष्टि से भी यह शीर्षक लाजबाब है। वास्तव में, पूरे नाटक की कथावस्तु एक रात में घटित होती है लेकिन नाटककार ने "सूर्य" शब्द दुबारा प्रयोग करके उक्तिवैचित्र्य को व्यंजित किया है। वास्तव में, नाटककार ने यहाँ रात्रि के बारह घंटों की कहानी को अंकोंमें बटोरकर कल्पकता दिखायी है। शीर्षक पढ़ते समय यशपाल के उपन्यास "बारह घंटे" की याद आ जाती है। अतः नाटक का शीर्षक पाठकों को भावविभोर कर देता है। इसमें संदेह नहीं कि नाटक का शीर्षक बड़ा ही मार्मिक, बड़ा ही काव्यात्मक, बड़ा ही सजीव और आकार में बड़ा ही बड़ा है। निसंदेह नाटक के शीर्षक में उपर्युक्त शीर्षक एक सार्थक प्रयोग है।

नाटक का शीर्षक "छोटे सैयद बड़े सैयद" नाटककार की अपनी सूझ है। "हसन अली हुसैन अली" रचना का विचार लेखक को 1968-69 में आ गया था। सुरेंद्र वर्मा स्वयं अपने पहले नाटकों से संतुष्ट नहीं थे। उनका कथन है "रचनाकार की स्वतंत्रता या स्त्री-पुरूष के संबंधों को लेकर लिखे गये पिछले नाटकों से मुझे संतोष नहीं हुआ।"[84] अतः नाटक के रचनाविधान में और शीर्षक देने में नाटककार की वैचारिकता प्रमुख है।

नाटककार ने हसन अली और हुसैन अली- इन दो ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर नाटक के शीर्षक की अवधारणा की है। नाटक में प्रयुक्त प्रमुख दो पात्र हुसैन अली और अब्दुल्ला खाँ हैं। ये दोनों भाई-भाई हैं लेकिन दोनों के स्वभाव एक दूसरे के विपरीत है। हुसैल अली छोटा भाई और अब्दुल्ला खाँ बड़ा भाई है। इन दो पात्रों को ध्यान में रखकर नाटककार ने "छोटे सैयद बड़े सैयद" शीर्षक का प्रयोग किया है। नाटक का प्रस्तुत शीर्षक विषयानुकूल है। उत्तर मुगलकालीन कठपुतली बादशाहों को दिल्ली के तख्तपर बिठाना फिर उनको गिराना, फिर बिठाना, फिर गिराना यह कार्य ये दो सैयद भाई कुशलता से और कुटिलता से करते थे। इन दो प्रमुख पात्रों की चरित्रसृष्टि, कार्यव्यापार आदि के आधार पर नाटक का शीर्षक "छोटे सैयद बड़े सैयद" तय कर दिया गया है। भाषा सौष्ठव की दृष्टि से भी शीर्षक उर्दू शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, और प्रतीकात्मक भी।

नाटक का शीर्षक "द्रौपदी" प्रतीकात्मक और मिथकीय प्रयोग से युक्त है। इसमें चित्रित सभी पात्र समकालीन जीवन से लिये गये हैं। इतनाही नहीं, इस नाटक के सभी दृश्य तथा प्रसंग आदि भी आधुनिकता के वाहक हैं। "द्रौपदी" शीर्षक पढ़ते ही सर्वप्रथम पाठक के मन में महाभारतकालीन द्रौपदी का चित्र उभर उठता है। परंतु प्रत्यक्ष नाटक में "द्रौपदी" शब्द का प्रयोग कहीं पर भी नहीं है। लेकिन नाटक की नायिका सुरेखा, मानो द्रौपदी का पार्ट एक नये सिरे से अदा करने का प्रयत्न कर रही है, ऐसा महसूस होता है। नाटककार ने महाभारतकालीन द्रौपदी को सुरेखा पर आरोपित कर के

आधुनिक नर-नारी संबंधों की त्रासदी को उजागर किया है। "द्रौपदी" का मिथक शीर्षक में अनुस्यूत है। सुरेखा एक ही पति के भीतर छिपे हुये विभिन्न चार रूपों से समझौता करते-करते बड़ी संत्रस्त बन बैठी है। यहाँ मनुष्य के खण्डित व्यक्तित्व को दिखाने के लिये मनमोहन में चार नकाबों की योजना की हैं। ये चार नकाब काला, सफेद, पीला, लाल आदि हैं। जयदेव तनेजा के शब्दों में - "नाटक का नाम द्रौपदी भ्रामक है, क्योंकि इसमें स्त्री की भूमिका प्रमुख नहीं है। इसमें स्त्री-पुरूष के विभिन्न व्यक्तित्वों को उतना नहीं झेलती, जितना पुरूष स्वयं झेलता है।"[95] फिर भी नाटक का शीर्षक प्रतीकात्मक और मिथकीय है।

नाटक के शीर्षक में आत्यंतिक गहन अर्थबोध है। गहरी व्यंग्यभरी प्रतीकात्मकता है। यांत्रिक जीवन के परिणाम स्वरूप खण्डित व्यक्तित्व टूटनेवाला पारीवारिक जीवन, रूग्ण मानसिकता दाम्पत्य जीवन के तान-तनाव आदि का चित्रण "द्रौपदी" नाटक की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। नाटक का शीर्षक छोटा होकर भी गागर में सागर समाने की क्षमता रखता है। शीर्षक में मिथकीयता है, प्रयोगात्मकता है, बिंब-प्रतिबिम्बात्मकता है। नाटक का शीर्षक अपने आप में प्रतीकात्मकता के साथ एक विस्तृत सामाजिक परिवेश समाये हुये बैठा है। जिसके आधारपर कठोर व्यंग्यात्मकता को मुखरत प्रदान करने का काम भी हुआ है। शीर्षक की दृष्टि से नाटक सफल है।

सुरेंद्र वर्मा लिखित नाटक "एक दूनी एक" शीर्षक की दृष्टि से पूर्णतः एक नया प्रयोग है। इसके पहले इसी प्रकार का प्रयोग मराठी में रामनगरकर ने "सात सक्कम् त्रेचाळीस" उपन्यास के शीर्षक के रूप में किया है। एक दूनी एक शीर्षक सिर्फ तीन शब्दों का और छः अक्षरों का गणितात्मक लगता है। परंतु यहाँ गणित की दृष्टि से बराबर नहीं वास्तव में एक दूनी एक, दो होना है। परंतु नाटककार ने व्यंग्यात्मकता की आड में जाकर "एक दूनी एक" ऐसा शीर्षक दिया है।

प्रस्तुत नाटक महानगरीय जीवन से संबंधित है। आज हर जगह मनुष्य का जीवन विसंगतिपूर्ण बन गया है। वह हर जगह टूटता जा रहा है अगर उसे जोडने की कोशिश की भी जाय तो भी वह टूटता है। इस नाटक में स्त्री-पुरूष संबंध और सेक्स संबंधों को प्रमुखता दी गयी है लेकिन आजकल महानगरीय जीवन में इन संबंधों का गणित ही बिगड़ जाता है। अतः नाटककार ने विषयवस्तु को ध्यान में रखकर गणितीय शब्दावली में गणित के सही उत्तर को दूर रखकर बिगड़े हुये उत्तर को साकार कर शीर्षक दिया है। नाटककार की यह अपनी सूझ-बूझ है और आज के बिगड़े हुये जीवन संदर्भ को रेखांकित करने में यह शीर्षक सार्थक बन पड़ा है। हिंदी नाट्य साहित्य के शीर्षकों में 'एक दूनी एक" शीर्षक एक नया प्रयोग है।

निष्कर्ष -

* सुरेंद्र वर्मा का नाट्यशिल्प प्रयोग की दृष्टि से विविधता रखता है जो नाटककार की पैनी दृष्टि तथा उनकी भावयत्री और कारयत्री प्रतिभा का मणिकांचन योग है।

* सुरेंद्र वर्मा के नाटकों का रचना विधान मानव जीवन से जुड़ा हुआ है। दिन-ब-दिन मानव जीवन टूटता बिखरता रहा है। इस बात को ध्यान में रखकर उनके नाटकों की कथावस्तु में भी टूटन बिखराव दिखायी पडता है।-ह्रासोन्मुख जीवन -ह्रासोन्मुखे वस्तुविन्यास के उत्कृष्ट उदाहरण "द्रौपदी", "एक दूनी एक" नाटक है। इतिहास को आधुनिक जीवन संदर्भ में परखकर नाटक की कथावस्तु बुनने का प्रयोग नाटककार की अपनी विशिष्टता है।

* मानव के बहुआयामी व्यक्तित्व को ध्यान में रखकर सुरेंद्र वर्मा ने अपने नाटकों में पात्रपरिकल्पना का अभिनव प्रयोग किया है। उनके इतिहासाश्रित, इतिहासाभासित पात्र आज के मानव का ही चित्र है। लघु मानव के अंकन में भी उनकी प्रयोगशीलता भी दिखायी पडती है। आधुनिक युगबोध से संपृक्त पात्र आधुनिक जीवन की गतिशीलता टूटन के परिचायक है। पात्रों की संख्या, पात्रों के नामकरण, पात्रों का खण्डित व्यक्तित्व अंकन नाटककार की प्रयोगधर्मिता की खासियत है।

* सुरेंद्र वर्मा के नाटकों के संवाद और भाषागत प्रयोग सामाजिक संरचना, मनोविज्ञान और आधुनिक युगबोध से जुड़े हुये है तथा पूरी तरह से नाट्यानुकूल है। सांकेतिक संवाद शिल्प, सूचनात्मक खण्डित संवाद, असंगत जीवन अतबध्द संवाद पात्रों के अभिनय की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। संवाद संप्रेषण में वैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग वस्तुनिष्ठ है। पत्रात्मक पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग अभिनव है।

* सुरेंद्र वर्मा के नाटकों की गीत संरचना मुख्यतया व्यंग्यात्मक है। आज के जीवन की विडंबना प्रस्तुत करने में सक्षम है। जयशंकर प्रसाद और हरिकृष्ण प्रेमी के नाटकों के गीतों से पूर्णतया अलग है।

* सुरेंद्र वर्मा के नाटकों के शीर्षक प्रतीकात्मक, बिंबात्मक, मिथकीय तथा गणितीय शैली के विशिष्ट प्रयोग है।

संदर्भ -

1. तीन नाटक (सेतुबंध) - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 29
2. वही - पृ. 29
3. वही - पृ. 40
4. आठवाँ सर्ग - सुरेंद्र वर्मा, प्र. संस्क. 1976, पृ. 54-55
5. वही - पृ. 58
6. वही - पृ. 73
7. आज के हिंदी रंग नाटक:परिवेश और परिदृश्य - जयदेव तनेजा, प्र.संस्क. 1980, पृ. 150
8. तीन नाटक (नायक खलनायक विदूषक) - सुरेंद्र वर्मा, प्र. संस्क. 1972, पृ. 59
9. वही - पृ. 83
10. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ. 30-31
11. वही - पृ. 34
12. वही - पृ. 53
13. हिंदी रंगकर्म:दशा और दिशा - जयदेव तनेजा, प्र.संस्क.1988, पृ.175
14. छोटे सैयद बड़े सैयद - सुरेंद्र वर्मा, प्र. संस्क. 1981, पृ. 157
15. तीन नाटक (द्रौपदी) - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 90
16. वही - पृ. 92
17. एक दूनी एक - सुरेंद्र वर्मा, प्र. संस्क. 1987, पृ. 9
18. वही - पृ. 19
19. वही - पृ. 20
20. वही - पृ. 20
21. वही - पृ. 21
22. वही - पृ. 79
23. तीन नाटक (सेतुबंध) सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 40
24. साठोत्तरी नाटक में स्त्री-पुरूष संबंध - नरेंद्रनाथ त्रिपाठी, पृ. 196
25. तीन नाटक (सेतुबंध) - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 31
26. आठवाँ सर्ग - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 58
27. समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच - जयदेव तनेजा, प्र.संस्क. 1978, पृ. 20
28. आठवाँ सर्ग - सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976 पृ. 25

29. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1976, पृ. 26–27

30. छोटे सैयद बड़े सैयद – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1981, पृ. 55-56

31. साठोत्तरी हिन्दी नाटक – संपा. डॉ. विजय कांत धर दुबे, प्र.सं. 1983, पृ. 96

32. हिंदी नाटक और नाटककार – डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ल, कु.नीलम मसंद, प्र.संस्क. 1977, पृ.147

33. तीन नाटक (सेतुबंध) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 29

34. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1975, पृ. 39

35. वही – पृ. 55

36. सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में रंगमंचयीता – देवेंद्रकुमार गुप्ता, प्र.संस्क. 1986, पृ. 39

37. तीन नाटक (द्रौपदी) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 119

38. वही – पृ. 134

39. वही – पृ. 102

40. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 60

41. वही – पृ. 75

42. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ. 42

43. वही – पृ. 43

44. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र बर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 48

45. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ. 28

46. आधुनिक हिंदी नाटक : भाषिक और संवादीय संरचना – गोविंद चातक, प्र.संस्क.1982 पृ.171

47. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 38

48. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ.31

49. वही – पृ. 44

50. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 14

51. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 49,50,51

52. हिंदी नाटक और नाटककार – सुरेशचंद्र शुक्ल, कु. नीलम मसंद, प्र.संस्क.1977, पृ. 149

53. तीन नाटक (द्रौपदी) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 116–117

54. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 29–30

55. तीन नाटक (नायक खलनायक विदूषक) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 75

56. तीन नाटक (द्रौपदी) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 94

57. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 55–56

58. छोटे सैयद बड़े सैयद – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1981, पृ. 62-63

59. तीन नाटक (नायक खलनायक विदूषक) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 64

60. वही – पृ. 28

61. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 30

62. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ.47

63. तीन नाटक (सेतुबंध) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 31

64. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 42

65. तीन नाटक (नायक खलनायक विदूषक) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1972, पृ. 67

66. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1975, पृ. 48

67. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 18

68. वही – पृ. 38

69. वही – पृ. 33

70. तीन नाटक (द्रौपदी) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 91

71. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1975, पृ. 54-55

72. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 72

73. आधुनिक हिंदी नाटक:भाषिक और संवादीय संरचना – गोविंद चातक, प्र.संस्क.1982 पृ.170

74. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ.37

75. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 92

76. साठोत्तरी हिन्दी नाटक - संपा. डॉ. विजय कांत धर दुबे, प्र. संस्क. 1983, पृ. 19

77. आठवाँ सर्ग – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1976, पृ. 29

78. सुरेंद्र वर्मा के नाटकों में रंगमंचीयता – देवेंद्रकुमार गुप्ता, प्र.संस्क. 1986, पृ.80

79. छोटे सैयद बड़े सैयद – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1981, पृ. 115

80. वही – पृ. 93-94

81. वही – पृ. 94

82. एक दूनी एक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1987, पृ. 59

83. वही – पृ. 65

84. वही – पृ. 77

85. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क.1975, पृ. 16

86. वही – पृ. 34

87. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, पृ. 37

88. वही – पृ. 37

89. हिंदी के प्रतीक नाटक – डॉ. रमेश गौतम, प्र.संस्क. 1980, पृ. 246

90. तीन नाटक (द्रौपदी) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 90-91

91. आधुनिक हिंदी नाटक:चरित्र सृष्टि के आयाम -(ऐतिहासिक और मिथकीय चरित्रसृष्टि)- डॉ.लक्ष्मीराय, प्र.सं. 197- पृ. 419

92. तीन नाटक (सेतुबंध) – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1972, पृ. 36

93. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक – सुरेंद्र वर्मा, प्र.संस्क. 1975, (निर्देशक का वक्तव्य) पृ. 7

94. नाट्य परिवेश – कन्हैयालाल नंदन, प्र.संस्क. 1981, पृ. 186

95. आज के हिंदी रंग नाटक:परिवेश और परिदृश्य – जयदेव तनेजा, प्र.संस्क. 1980, पृ. 133